।। श्री गणेशाय नमः ।।



श्री सूर्याय नमः

प्रत्यक्षदेव श्री सूर्यनारायण



सूर्य नमस्कार

(यौगिक व्यायाम)

लेखक- आचार्य विनय कृष्ण

श्री श्रीनाथाय नमोऽस्तुते



11.3

31[illegible]4



।। श्री गणेशाय नमः ।।



श्री सूर्याय नमः

प्रत्यक्षदेव श्री सूर्यनारायण
एवं
सूर्य नमस्कार
(यौगिक व्यायाम)

लेखक- आचार्य विनय कृष्ण





स्कूल ऑफ योग साइंस एण्ड हेल्थ टेक्नोलॉजी
हैप्पी होम कैम्पस, मकबूल आलम रोड, खजुरी क्रासिंग,
वाराणसी – २२१००२

पुस्तक का नाम :
प्रत्यक्षदेव श्रीसूर्यनारायण सूर्य-नमस्कार यौगिक व्यायाम।

लेखक :
आचार्य विनय कृष्णा।

प्रथम संस्करण :
चैत्र शुक्ल नवमी-वैशाखी/रामनवमी वि. सम्बत् २०६५,
१३ अप्रैल सन् २००८ ई.।

मुद्रि प्रतियाँ :
सहस्त्र संख्या परिमित।

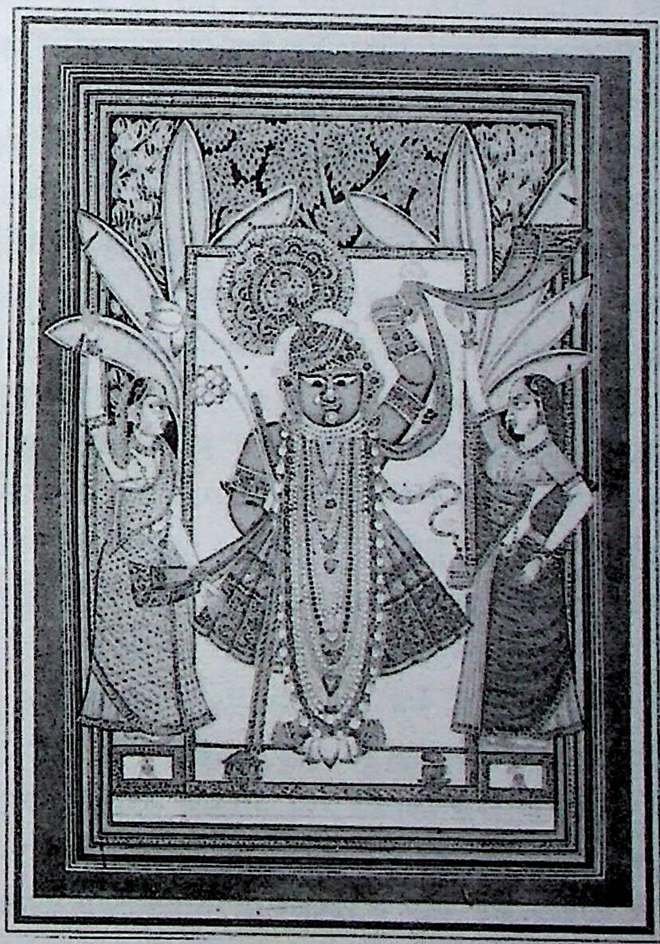
प्रकाशक :
हैप्पी होम स्कूल ऑफ योग साइंस एण्ड हेल्थ टेक्नोलॉजी
हैप्पी होम कैम्पस, मकबूल आलम रोड, खजुरी त्रिमुहानी, वाराणसी - २२१००२
फोन : ०५४२-३२९५५४६, २५०३१२८, फैक्स : ०५४२-२५०२३८२
E-mail : happyhomevns@rediffmail.com

पुनः प्रकाशन :
प्रकाशनाधीन सुरक्षित।

सहयोग राशि : रुपये १००/- मात्र
(प्राप्त राशि का उपयोग पूर्णरुपेण जनहित में)

मुद्रक :
श्रीजी प्रिन्टर्स
नाटी इमली, वाराणसी - २२१००१
फोन : ०५४२-२२०११०४, ३२५७३२९
E-mail : shrijeeprint@sify.com

श्री श्रीनाथाय नमोऽस्तुते



श्री श्रीनाथ जी के चरणों में

सादर समर्पण

आचार्य विनय कृष्ण



प्रस्तावना

सृष्टि के पहले सर्वत्र जल ही जल था। देव-मानव, पशु-पक्षी, तरु-लता, कुछ भी नहीं था। सर्वप्रथम केवल जगदीश्वर, प्रजापति ब्रह्मा का अविर्भाव हुआ। तभी उन्हें एक कमलपत्र दिखलाई पड़ा और वे उस कमलपत्र पर जा बैठे। कुछ काल व्यतीत होने पर उनके मन में जगत् की सृष्टि करने की इच्छा हुई अतः सृष्टि की रचना के लिए प्रजापति ब्रह्मा तपस्या करने लगे। सर्वप्रथम अरुण, केतु एवं वातरशन ऋषियों का अविर्भाव हुआ। उसी उपधान-क्रम से भगवान आदित्य का जन्म हुआ। तत्काल विश्व प्रकाशमय हो गया। हे प्रकाशपूर्ण आदित्य! हमारे अन्धकारपूर्ण हृदय में भी पूर्ण प्रकाश के उदय होने का अनुग्रह प्रदान करें। (तै.आ. १/२३/२-५)

सूर्य एक अग्नि पिण्ड है जो सदा प्रज्वलित रहता है। सूर्यपिण्ड अग्नि और सोम दोनों की समष्टि है जैसा कि शत-पथ श्रुति का विज्ञान है- **'आहुतेः (सोमाहुतेः) उदैत् (सूर्यः)'** अर्थात् सोम की आहुति से ही सूर्य का उदय हुआ है। वही सूर्यदेव जगत् की आत्मा हैं। **'सूर्य आत्मा जगतस्तथुषश्च'** (ऋग्वेद- १/११५/१)

अनादिकाल से आजतक सूर्य पूर्व में उदित होकर अनन्त आकाश में विचरण करते हुए पश्चिम में अस्त होने वाले परम तेजस्वी एवं स्तुत्य प्रत्यक्षदेव श्रीसूर्यनारायण जिनकी सप्तरंगी किरणों से इस पृथ्वी पर प्राणी मात्र का जीवन इतना आकृष्ट एवं चमत्कृत होता है, उस तेजस्वी भगवान सूर्य का स्वागत व पूजन इस ब्रह्माण्ड के प्रायः सभी मानव करते हैं। समय की कल्पना, काल का विभाजन, मास और ऋतुओं का आवागमन, चन्द्रमा के क्षय और वृद्धि द्वारा कृष्ण एवं शुक्ल पक्षों का होना आदि सभी व्यवहारिक ज्ञान का बोध होता है, वह ज्ञानदेव सूर्यदेव ही हैं। अनादि काल से ही मनुष्य जीवन की अनन्त प्रेरणाओं और इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता है।

वेदों में उद्धरित है-

ॐ असतो मा सद्गमय। तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय। (वृह.कोष.उ./शतपथ ब्रा.१४/४/१३)

हे भगवान् आप हमें असत से सत् की ओर और तम (अज्ञान/अन्धकार) से ज्योति (ज्ञान) की ओर तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलें। अन्धकारमय जागतिक प्रपञ्चों से आत्म प्रकाश की ओर ही चलना मानव जीवन की उचित यात्रा है।

भविष्योत्तर पुराण के आदित्य हृदयस्तोत्र- ११८ में कृष्ण अर्जुन संवाद में भगवान श्रीकृष्ण ने सूर्य को त्रिदेव कहा है-

उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः।
अस्तकाले स्वयं विष्णुस्त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।।

सूर्यदेव उदयकाल में ब्रह्मा के रूप में, मध्यकाल में महेश्वर के रूप में, अस्त के समय में विष्णु के रूप में त्रिमूर्ति हैं।

महर्षि पतंजलि कहते हैं कि **'भुवनज्ञानं सूर्येसयंमात्'** सूर्योपासना सूर्यनमस्कार यौगिक व्यायाम करने से संसार का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। 'तुम सूर्य को देखो तुम पवित्र हो जाओगे'।

'आरोग्यं भास्कारादिच्छेत्'। (म.पु.- ६७/७१) बिमारियों से पीड़ित हो तो सूर्य की उपासना करो।

रामचरितमानस में भी कहा है- **'नयन दिवाकर कचधनमाला'**। (६/१५/३) आँखों के समस्त रोग सूर्य की उपासना से ठीक हो जाते हैं।

सूर्यनमस्कार अपने आप सूर्यदेव की आराधना है। स्वास्थ्यकर यौगिक व्यायाम भी सूर्यदेव की आराधना है। साधना से सिद्धि मिलती है और व्यायाम से शारीरिक स्वास्थ्य-सौन्दर्य की सम्पुष्टि होती है। इसलिए हमलोग आदिदेव सूर्य का ध्यान व प्रणाम करते हैं।

यजुर्वेद ३६/२४ में भी कहा है- मैं सौ वर्ष तक देखूँ, सौ वर्ष तक जीवित रहूँ, सौ वर्ष तक सुनूँ, सौ वर्ष पर्यन्त बोलूँ, सौ वर्ष तक सुखी एवं स्वतंत्र जीवन भोगूँ।

मैं आशा करता हूँ कि अनन्य भाई आचार्य विनय कृष्ण ने प्रत्यक्षदेव श्रीसूर्यनारायण सूर्यनमस्कार (यौगिक व्यायाम) पुस्तक को सरल भाषा में आवश्यक धार्मिक, वैदिक व यौगिक तथा वैज्ञानिक पहलुओं के साथ प्रस्तुत किया है जिससे अनेकोनेक लोगों को आदर्श जीवन जीने की प्रेरणा मिलती रहेगी।

नरेन्द्र प्रताप सिंह

चैत्र शुक्ल प्रतिपदा वि.सं.-२०६५.
०७ अप्रैल २००८.

साईं सदन, लाल विहार,
बमरौली, इलाहाबाद



प्राक्कथन

श्री श्रीनाथजी की असीम कृपा से एवं स्मृतिशेष माता-पिता के आशीर्वाद से तथा श्री दण्डी स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती जी श्री विद्यामठ केदारखण्ड, केदार घाट, वाराणसी। (अनन्य व परमप्रिय शिष्य एवं प्रतिनिधि जगत्गुरू शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती जी महाराज) की प्रेरणा व प्रोत्साहन से **प्रत्यक्षदेव श्री सूर्यनारायण एवं सूर्य-नमस्कार (यौगिक व्यायाम)** पुस्तक रचना को सरल भाषा में व्यक्त करने का प्रयास किया है।

सांख्य योगी डॉं राकेश पाण्डेय एवं श्री संजय शर्मा, प्रशिक्षक आर्ट ऑफ लिविंग, जिनकी यौगिक साधना एवं सूर्योपासना-सूर्यनमस्कार (यौगिक व्यायाम) क्रियाएँ प्रेरणादायक रही हैं। मैं उनका अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

इस पुस्तक के माध्यम से सभी साधारण व्यक्ति को सूर्योपासना से लेकर सूर्यनमस्कार, व्यायाम करने की विधि एवं होने वाले लाभ का विवरण है तथा जो तथ्य दिया है वह मूर्धन्य विद्वानों के मनन, चिन्तन एवं आध्यात्मिक ज्ञान से लिया गया है। प्राचीन ग्रन्थ वेद, पुराण, आयुर्वेद ग्रन्थ, रामायण, गीता, उपनिषद, पा. योग दर्शन एवं गीता प्रेस- सूर्यांक के गहन अध्ययन, मनन एवं चिन्तन के पश्चात, पुस्तक रचना में एकत्र ज्ञान सामग्री दी गयी है। मैं इन सभी लेखकों, विद्वानों, महर्षियों का आभारी हूँ।

इस पुस्तक में सूर्यनमस्कार की शारीरिक भंगिमाएँ, संस्थितियाँ (Poses/Postures) बाल योगी गौरव की है।

श्रीमती सविता अग्रवाल, प्रिंसिपल– हैप्पी होम इंगलिश स्कूल वाराणसी, ने पुस्तक प्रकाशन में पूरा सहयोग दिया है, साथ ही परिवार के सभी सदस्यगण एवं सहयोगी हितैषी, शुभ–चिन्तक व इष्टमित्र जिन्होंने अपना आत्मीय सहकार दिया है, सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

सभी पाठकों से विनम्र निवेदन है कि इस पुस्तक रचना में जो भी त्रुटियाँ तथा कमियाँ रह गयी है उन्हें सुधारने के लिए अपना बहुमूल्य सुझाव देकर मुझे कृतार्थ करें।

आचार्य विनय कृष्ण

विवरणिका

पृष्ठ संख्या



अध्याय- १

प्रत्यक्षदेव श्री सूर्यनारायण की वंदना एवं प्रार्थना



ध्येयः सदा सवितृमण्डलमध्यवर्ती नारायणः सरसिजासनसन्निविष्टः।
केयूरवान् मकरकुण्डलवान् किरीटीहारी हिरण्मयवपुर्धृतशङ्खचक्रः।।

'भगवान् नारायण तपे हुए स्वर्ण-जैसे कान्तिमान् शरीर धारण किये हुए हैं। उनके गले में हार एवं सिर पर किरीट विराजमान हैं। उनके कान मकरकुण्डल से सुशोभित हैं। वे कंगन से अलंकृत अपने दोनों हाथों में भक्त भयनिवारण के लिये शङ्ख-चक्र धारण किये हुए हैं। वे सूर्यमण्डल में कमलासन पर बैठे हुये हैं। उनकी वंदना करता हूँ।

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रं तन्न आ सुव।।

(ऋक्- ५/८२/५, शुक्ल यजु. ३०/३)

समस्त संसार को उत्पन्न करने वाले सृष्टि-पालक संहार करने वाले किंवां विश्व में सर्वाधिक देयीप्यमान् एवं जगत को शुभ कर्मों में प्रवृत्त करने वाले हे परब्रह्म स्वरूप सवितादेव! आप हमारे सम्पूर्ण अधिभौतिक, अधिदैविक, आध्यात्मिक दुरतों (बुराईयों-पापों) को हमसे दूर-बहुत दूर ले जायें, दूर करें किन्तु जो भद्र (भला) है, कल्याण है, श्रेय है, उसे हमारे लिए, विश्व के हम सभी प्राणियों के लिए चारों ओर से (भली-भांति) ले आयें, दें- 'यद् भद्रं तन्न आ सुव'। सूर्यदेव से प्रार्थना करते हैं।

ॐ असतो मा सद्‌गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय।

(वृह.कोष.उ./शतपथ ब्रा.१४/४/१३)

हे भगवान् आप हमें असत से सत् की ओर और तमं (अज्ञान/अन्धकार) से ज्योति (ज्ञान) की ओर तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर ले चलें।

प्रभाकर नमोऽस्तु ते

(श्रीशिवप्रोक्तं सूर्याष्टकम्)

आदिदेव नमस्तुभ्यं प्रसीद मम भास्कर।
दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोऽस्तु ते।।१।।
सप्ताश्वरथमारूढ़ प्रचण्डं कश्यपात्मजम्।
श्वेतपद्मधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।२।।
लोहितं रथमारूढ़ सर्वलोकपितामहम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।३।।
त्रैगुण्यं च महाशूरं ब्रह्मविष्णुमहेश्वरम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।४।।
बृंहितं तेजःपुञ्जं च वायुमाकाशमेव च।
प्रभुं च सर्वलोकानां तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।५।।
बन्धूकपुष्पसंकाशं हारकुण्डलभूषितम्।
एकचक्रधरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।६।।
तं सूर्यं जगत्कर्तारं महातेजःप्रदीपनम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।७।।
तं सूर्यं जगतां नाथं ज्ञानविज्ञानमोक्षदम्।
महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्।।८।।

।। इति श्रीशिवप्रोक्तं सूर्याष्टकं सम्पूर्णम् ।।

हे आदिदेव भास्कर! आपको प्रणाम है। हे दिवाकर! आपको नमस्कार है। हे प्रभाकर! आपको प्रणाम है आप मुझपर प्रसन्न हों।।१।। सात घोड़ोंवाले रथपर आरूढ, हाथ में श्वेत कमल धारण किये हुए, प्रचण्ड तेजस्वी कश्यपकुमार सूर्य को मैं प्रणाम करता हूँ।।२।। लोहित वर्ण के रथ पर आरूढ सर्वलोकपितामह महापापहारी श्रीसूर्यदेव को मैं प्रणाम करता हूँ।।३।। जो त्रिगुणमय-ब्रह्मा, विष्णु और शिवस्वरूप हैं, उन महापापहारी महान् वीर श्रीसूर्यदेव को मैं नमस्कार करता हूँ।।४।। जो बढ़े हुए तेज के पुञ्ज और वायु तथा आकाश के स्वरूप हैं, उन समस्त लोकों के अधिपति भगवान् सूर्य को मैं प्रणाम करता हूँ।।५।। जो बन्धूक (दुपहरिया) पुष्प के समान रक्तवर्ण हैं और हार तथा कुण्डलों से विभूषित हैं, उन एक चक्रधारी श्रीसूर्यदेव को मैं प्रणाम करता हूँ।।६।। महान् तेज के प्रकाशक, जगत् के कर्ता, महापापहारी सूर्यभगवान् को मैं नमस्कार करता हूँ।।७।। ज्ञान-विज्ञान तथा मोक्ष के प्रदाता, बड़े-से-बड़े पापों के अपहरणकर्ता, जगत् के स्वामी भगवान् सूर्यदेव को मैं प्रणाम करता हूँ।।८।।

प्रातःकाल सूर्यदेव को स्मरण एवं प्रणाम करते हैं।

सूर्यदेव के प्रातःस्मरणीय द्वादश नाम

आदित्यः प्रथमं नाम द्वितीयं तु दिवाकरः।
तृतीयं भासकरः प्रोक्तं चतुर्थं तु प्रभाकरः।।
पञ्चमं तु सहस्त्रांशुः षष्ठं त्रैलोक्यलोचनः।
सप्तमं हरिदश्वश्च अष्टमं च विभावसुः।।
नवमं दिनकरः प्रोक्तो दशमं द्वादशात्मकः।
एकादशं त्रयोमूर्तिर्द्वादशं सूर्य एव च।।

(–आदित्यहृदयस्तो०)

प्रथम– आदित्य, द्वितीय– दिवाकर, तृतीय– भास्कर, चतुर्थ– प्रभाकर, पंचम– सहस्त्रांशु, षष्ठं– त्रैलोक्यलोचन, सप्तम्– हरिदश्वश्च, अष्टम्– विभावसु, नवम्– दिनकर, दशम्– द्वादशात्मक, एकादशम्– त्रयोमूर्ति, द्वादशम्– सूर्य।

प्रातः काल सूर्यदेव के द्वादश नामों को स्मरण करना चाहिए। जो हम सब के लिए कल्याणकारी हैं।

सूर्य स्मरण

प्रातः स्मरामि खलु तत्सवितुर्वरेण्यं
रूपं हि मण्डलमृचोऽथ तनुर्यजूंषि।
शामानि यस्य किरणाः प्रभवादिहेतुं
ब्रह्माहरात्मकमलक्ष्यमचिन्त्यरूपम्।

'सूर्य का वह प्रशस्त रूप जिसका मण्डल ऋग्वेद, कलेवर यजुर्वेद तथा किरणें सामवेद हैं। जो सृष्टि आदि के कारक हैं, ब्रह्मा और शिव के स्वरूप हैं तथा जिनका रूप अचिन्त्य और अलक्ष्य है, प्रातःकाल मैं उनका स्मरण करता हूँ।'

त्रिदेवों के साथ नवग्रह स्मरण

ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च।
गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः कुर्वन्तु सर्वे मम सुप्रभातम्।

(मा.पु.स्मृ.- ३२)

'ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सूर्य, चन्द्रमा, मङ्गल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु- ये सभी मेरे प्रातःकाल को मङ्गलमय करें।



अध्याय- २

प्रत्यक्षदेव सूर्यनारायण की महिमा एवं प्रभाव

ऐहि सूर्य सहस्त्रांशो तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं दिवाकर।।

भगवान् सूर्य प्रत्यक्ष देवता हैं, परब्रह्म हैं, समस्त विश्व की आत्मा हैं, सूर्यदेव से ही सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति होती है, पालन होता है और उसी में उनका विलय होता है।

(सूर्योपनिषद १/४)

सूर्य आत्मा जगतस्तथुषश्च

सूर्यदेव सम्पूर्ण जगत की आत्मा हैं।

(ऋग्वेद- १/११५/१)

भुवनज्ञानं सूर्येसयंमात्।

समस्त भुवनों का ज्ञान सूर्यदेव के ध्यान से प्राप्त होता है।

हम प्रतिदिन आकाश में सूर्यमण्डल का दर्शन करते हैं, वह अधिभूत सूर्य हैं, जगत के पोषक, गमनशील सबके नियंता, रश्मियों के स्रोत सूर्यदेव हैं।

'सरति सात्यतेन परिभ्रमत्याकाश इतिः सूर्यः।'

आकाश मण्डल में अनवरत गति से परिभ्रमण करता हुआ महान् तत्व सूर्य हैं।

हमारे हिन्दू धर्म में पंचदेवों की उपासना का वर्णन मिलता है। जैसा कपिल तंत्र में वर्णित है-

आकाशस्याधिपो विष्णुरग्नेश्चैव महेश्वरी।
वायोः सूर्यः क्षितेरीशो जीवनस्य गणाधिपः।।

आकाश के अधिपति विष्णु, अग्नि की महेश्वरी, वायुतत्त्व के अधिपति सूर्य, पृथ्वी के शिव एवं जल के अधिपति भगवान् गणेश हैं।

सूर्यदेव नौ-ग्रह देवों में प्रथम देव हैं और सर्वप्रथम पूजे जाते हैं।

सूर्यदेव का प्रभाव

सूर्यदेव के द्वारा ही रातदिन के काल का विभाजन होता है। सूर्यदेव ही ग्रहों के राजा और प्रवर्त्तक हैं। सूर्यदेव रात्रि में अपनी शक्ति को अग्नि के रूप में परिवर्तित कर देते हैं। आकाश-मण्डल प्रतिदिन नियम से सत्यमार्ग पर स्वयं घूमते हुये संसार का संचालन करते हैं। सूर्यदेव अपने तेज से सबको प्रकाशित करते हैं।

(ऋग्वेद में वर्णित है)

सूर्य की किरणें पृथ्वी पर गीले पदार्थों को सोख लेती है और खारे समुद्र जल को स्वयं पीकर जल को पीने योग्य बना देती है।

सूर्य की किरणों में से चार सौ किरणें जल बरसाती हैं, तीस किरणे हिम (शीत) उत्पन्न करती हैं। सूर्य की किरणों से औषधि शक्तियाँ बढ़ती हैं। आग में आहुति सूर्य तक पहुँच कर अन्न उत्पन्न करती हैं। यज्ञ से पर्जन्य और पर्जन्य से अन्न होता है। यह शास्त्र सिद्ध एवं लोक प्रसिद्ध है।

सूर्यदेव की हजारों रश्मियाँ हैं, जिसमें सात रश्मियाँ मुख्य हैं- जो ग्रह नक्षत्र-मण्डल की प्रतिष्ठा मानी गयी है। ये सात रश्मियाँ क्रमशः- १. सुषुम्णा, २. सुरादना, ३. उदन्वसु, ४. विश्वकर्मा, ५. उदावसु, ६. विश्वव्यचा / अस्वराट्, ७. हरिकेश हैं।

इन सात रश्मियों का रंग अग्रेजी में VIBGYOR है यानी १. वायलेट (बैगनी), २. इण्डिगो (नील), ३. ब्लू (नीला), ४. ग्रीन (हरा), ५. यलो (पीला), ६. ऑरेन्ज (नारंगी), ७. रेड (लाल)।

इन सात रश्मियों के द्वारा मानव शरीर स्वस्थ व ऊर्जावान बना रहता है। यह किरणें प्राणशक्ति प्रदाता हैं और सुखदाता हैं।

महर्षियों ने सूर्यदेव के सात घोड़े का रथ बताया है वही सूर्यदेव के आभामण्डल की सप्तरंगी किरणों का जाल है जो सात घोड़े के रूप में वर्णित है क्योंकि यही सप्तरंग किरणें एक-एक अश्वशक्ति के रूप में अपना प्रभाव तेजी से फैलाती हैं, जो सशक्त होती हैं।

किरणों के सातरूप होने के कारण उन्हें सप्तरंग कहते हैं और इन्हीं सातरूपों को ही सात ऋतुओं के रूप में जाना जाता है। जगत में बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद्, हेमन्त और शिशिर तथा सातवीं साधारण ऋतु है। यही सातों सूर्य की किरणें ही हैं। सूर्य की किरणों के तारतम्य से सब परिवर्तन है। इन्हीं सात किरणों की सात अवस्थायें भी हैं। भूमि, चन्द्रमा, बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि जो सप्तनाम से जानी जाती हैं।

'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्'

(मत्स्य पुराण ६७/७१)

सूर्यदेव समस्त रोगों को दूर करने वाले देवता हैं।

यत् सर्वं प्रकाशयति तेन सर्वान् प्राणान् रश्मिषु सन्निधत्ते।
(प्र० उ० १/६)

सूर्य की किरणों से ही सम्पूर्ण जगत् में प्राणतत्त्व का संचार होता है। जहाँ प्राण पहुँचता है, वहाँ ही जीवन होता है।

अतः घरों की रचना ऐसी बनायी जाती है कि उनमें अधिक-से-अधिक सूर्य की रश्मियाँ आयें और घर को शुद्ध करें। रोगोत्पादक कीटाणुओं का विनाश इन्हीं सूर्य-रश्मियों से होता है। सूर्य का जब उदय होता है, वह सम्पूर्ण प्राणमय है। उदय होते ही वे अपनी प्राणपूर्ण किरणों से सभी दिशा उपदिशाओं को प्रकाशित कर देते हैं और सर्वत्र अपनी अद्भुत प्राणशक्ति से सबको नवजीवन प्रदान करते हैं।

ऋग्वेद में वर्णित है- सूर्यदेव अन्धकार का नाश अपनी ज्योति से करते हैं तथा प्रकाश से सम्पूर्ण जगत् में स्फूर्ति उत्पन्न कर देते हैं। (ऋग्वेद- १०/३७/४)

सूर्यदेव समस्त दिखने वाले कीड़े-मकोड़े एवं न दिखने वाले कीटाणुओं (वायरस) को नष्ट करने वाले एवं रजनीचरों (रात में सक्रिय मच्छरों) को मारते हुए सूर्यदेव उदित होते हैं।
(ऋग्वेद- १/१९/८)

अथर्ववेद में कहा गया है- सूर्यदेव नेत्रज्योति की वृद्धि करते हैं, सूर्यदेव ही हमारे नेत्र हैं, वायु ही प्राण है, अन्तरिक्ष ही आत्मा है तथा पृथ्वी ही शरीर है। (अथर्ववेद- ५/९/७)

सूर्यदेव समस्त चराचर की आत्मा हैं। सूर्य का इस विशाल ब्रह्माण्ड में वही स्थान है जो शरीर में आत्मा का। सूर्य के सभी जड़-चेतन पदार्थों की आत्मा कहा जाता है। यह सूर्यदेव सभी जंगम तथा स्थावर पदार्थों की आत्मा हैं। (ऋग्वेद- १/११५/१)

यजुर्वेद में सूर्यदेव आयुवर्धक हैं। रोगों से बचाव तथा उनके उपचार से ही आयु वृद्धि होती है लेकिन वेदों में सूर्य एवं दीर्घायु का प्रत्यक्ष सम्बन्ध दिखलाया गया है। देवताओं द्वारा स्थापित वे तेजस्वी सूर्य पूर्व दिशा में उदित हो रहे हैं। उनके अनुग्रह से हम सौ वर्षों तक तथा उससे भी अधिक देखें और जीवित रहें। (यजुर्वेद- ३६/२४)

ऋग्वेद में सूर्य की महिमा के चौदह सूक्त हैं। सौर सम्प्रदाय अत्यन्त प्राचीन है उपनिषदों में भी सूर्यदेव का विस्तृत वर्णन है और ब्रह्मस्वरूप माना जाता है।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।

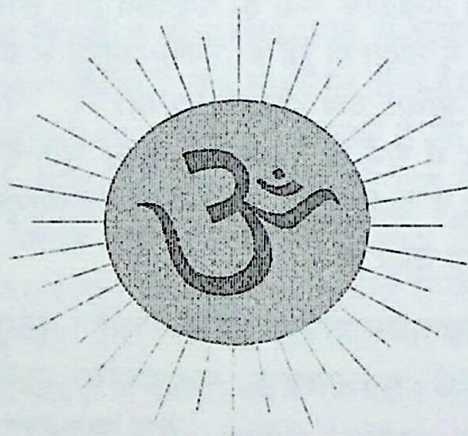
(योग चूडामण्युपनिषद -२९, ईशोपनिषद- १५)

हे संसार के पोषण करने वाले, लगातार गमन करने वाले, प्रजापति पुत्र सूर्यदेव आप अपनी किरणों को, अपने तेज को समेट लें जिससे मैं आप के अत्यन्त कल्याण स्वरूप को देख सकें।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य
धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्।

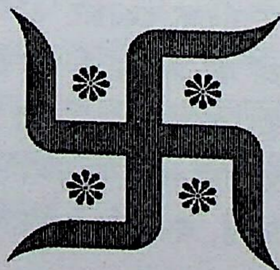
वेद का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मन्त्र गायत्री है, जिसे वेदों की माता भी कहा जाता है। यह मन्त्र सविता अथवा सूर्य के महत्त्व का ही वर्णन करता है। पौराणिक एकाक्षर 'ॐ' भी सूर्य से ही सम्बद्ध है। यह अग्नि तथा त्रिदेवों का प्रतीक है, यह एकचक्र में लिखा हुआ सूर्यमण्डल का द्योतक है। छान्दीग्य उपनिषद में ॐ का महत्त्व इस प्रकार वर्णित है- सभी प्राणियों का सार पृथ्वी है, पृथ्वी का सार जल है, जल का सार वनस्पति है, वनस्पति का सार मनुष्य है, मनुष्य का

सार वाणी है, वाणी का सार ऋग्वेद है, ऋग्वेद का सार सामवेद है, सामवेद का सार उग्दीथ है और उसी को ॐ कहते हैं।



'स्वस्तिक' हिन्दूओं का एक मात्र सौर चिन्ह है जिसे सथिया भी कहते हैं। इस शब्द का अर्थ- भलि-भाँति रहना। यह तेज और महिमा का प्रतीक है तथा इस बात का संकेत करता है कि यह जीवन मार्ग बड़ा कठिन/टेढ़ा है यह मनुष्य को व्याकुल कर सकता है। किन्तु प्रकाश का मार्ग साथ-साथ चलता है। जिस प्रकार सूर्यदेव पूर्व से पश्चिम दिशा में नियमित और अनवरत गति से परिभ्रमण करते रहते हैं।

"सरति सात्यतेन परिभ्रमत्याकाश इतिःसूर्यः"



अध्याय- ३

सूर्यदेव की उत्पत्ति

(पौराणिक दृष्टि से)

जब ब्रह्मा अण्ड का भेदन कर उत्पन्न हुये तब उनके मुख से 'ॐ' यह महाशब्द उच्चारित हुआ। यह ओंकार परब्रह्म है और यही सूर्यदेव का शरीर है। ब्रह्मा के चारो मुखों से चार वेद अविर्भूत हुये, जो तेज से उदीप्त हो रहे थे। ओंकार के तेज से इन चारों को आवृत कर लिया। इस तरह ओंकार के तेज से मिलकर चारों एकीभूत हो गये। यही वैदिक तेजोमय ओंकारस्वरूप सूयदेव हैं। यह सूर्यस्वरूप तेज सृष्टि के सबसे आदि में पहले प्रकट हुआ, इसलिए इसका नाम आदित्य पड़ा।

ब्रह्मा के मुख से 'ॐ' प्रकट हुआ, उससे पहले भूः, भुवः और स्वः उत्पन्न हुये। यह ब्रह्मातिन्नय ही आदिदेव सूर्य का स्वरूप है। साक्षात् परब्रह्म स्वरूप 'ॐ' सूर्य का सूक्ष्मरूप है।

सूर्य की उत्पत्ति के पहले पूरे ब्रह्माण्ड में अन्धकार फैला हुआ था। ऋग्वेद के पुरूष सुक्त में कहा गया है।

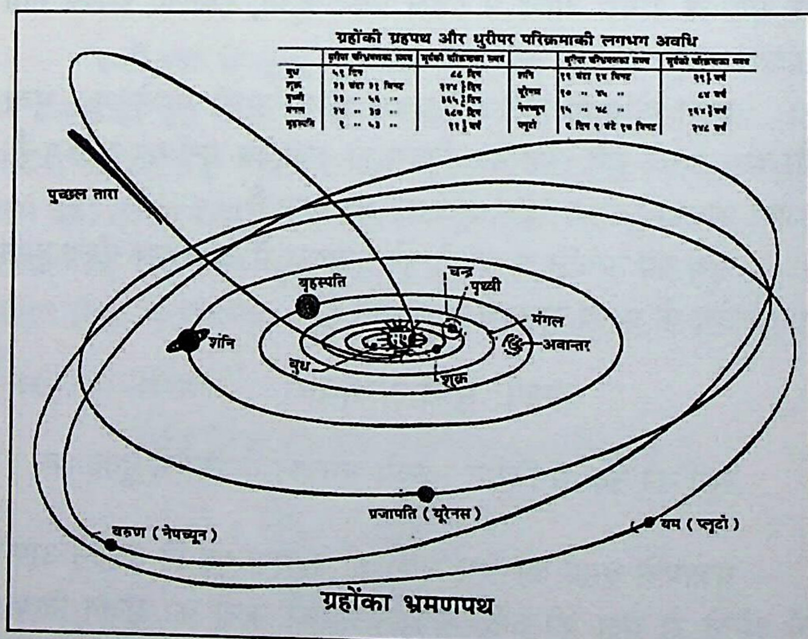
चक्षोः सूर्यो अजायत। (ऋग्वेद- १०/९०/१३)

सूर्य का उद्गम विराट स्वरूप भगवान् के नेत्र से हुआ था।

प्रजापति ब्रह्मा को जब सृष्टि की कामना हुई तो उन्होंने अपने दायें अंगुठे से वक्ष की ओर बायें से उनकी पत्नी का सृजन किया। ब्रह्मपुत्र मरीचिका का ही दूसरा नाम कश्यप था। दक्ष की तेरहवीं कन्या के रूप में अदिति के साथ कश्यप का विवाह हुआ। अदिति के

गर्भ से सूर्य भगवान् ने जन्म लिया। भगवान् सूर्य के समस्त चराचर जगत् का अविर्भाव हुआ। अदिति ने पहले सूर्य की अराधना की थी, इसलिए वे अदिति के गर्भ से पुत्र के रूप में प्रकट हुये। जो मार्तण्ड नाम से जाने जाते हैं।

सूर्यदेव पूर्व से पश्चिम दिशा की ओर भ्रमण करते हैं उस आकाश पथ को रवि पथ कहते हैं। उस मार्ग को २७-भागों में विभक्त करके उनको नक्षत्र नाम दिया गया है। इस विशाल आकाश स्थान को (सौर जगत्) कहते हैं। इस भ्रमण पथ में सूर्य के साथ उनके आसपास में नौग्रह घूमते हैं। उसमें पृथ्वी का भी समावेश हो जाता है। इन २७-नक्षत्रों के अधिष्ठाता सूर्यदेव ही हैं।



ग्रहोंकी ग्रहपथ और धुरीपर परिक्रमाकी लगभग अवधि

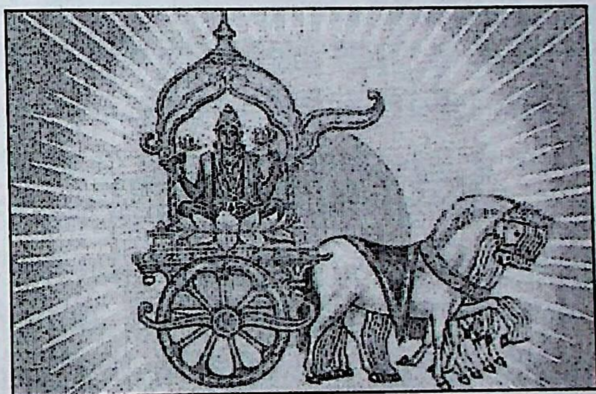
	धुरीपर परिभ्रमणका समय	सूर्यकी परिक्रमाका समय		धुरीपर परिभ्रमणका समय	सूर्यकी परिक्रमाका समय
बुध	५९ दिन	८८ दिन	शनि	१० घंटा १४ मिनट	२९ ½ वर्ष
शुक्र	२३ घंटा २१ मिनट	२२४ ¾ दिन	यूरेनस	१० " ४९ "	८४ वर्ष
पृथ्वी	२३ " ५६ "	३६५ ¼ दिन	नेपच्यून	१५ " ४८ "	१६४ ¾ वर्ष
मंगल	२४ " ३७ "	६८७ दिन	प्लूटो	६ दिन ९ घंटे १७ मिनट	२४८ वर्ष
बृहस्पति	९ " ५३ "	११ ¾ वर्ष			

ग्रहोंका भ्रमणपथ



अध्याय- ४

सूर्यदेव का स्वरूप



सूर्यदेव कमलासन पर विराजमान रहते हैं, उनकी दो भुजायें हैं और दोनों हाथों में कमल सुशोभित है। सिर पर स्वर्ण मुकुट तथा गले में रत्नों की माला है। उनकी कान्ति कमल के भीतरी भाग की - सी है वे सात घोड़ो के रथ पर आरूढ़ रहते हैं।

सूर्यदेव का एक नाम सविता भी है, जिसका अर्थ सृष्टि करने वाला 'सविता सर्वस्य प्रसविता' ऋग्वेद के अनुसार आदित्य-मण्डल के अन्तःस्थित सूर्यदेव सबके प्रेरक, अन्तर्यामी तथा परमात्मा स्वरूप हैं। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सूर्य ब्रह्मस्वरूप हैं, सूर्य से जगत् उत्पन्न होता है और उन्हीं में स्थित है। सूर्य सर्वभूत सनातन परमात्मा हैं। यही भगवान् भास्कर ब्रह्मा, विष्णु और रूद्र बनकर जगत् का सृजन, पालन और संहार करते हैं।

सूर्यदेव का वर्ण लाल है। इनका वाहन रथ है। इनके रथ में एक ही चक्र है, जो संवत्सर कहलाता है। इस रथ में मासस्वरूप

बारह अरे हैं, ऋतुरूप छः नेमियाँ और तीन चौमासे रूप में तीन नाभियाँ हैं। इनके साथ साठ हजार बालखिल्य स्वस्तिवाचन और स्तुति करते हुये चलते हैं।

साथ ही साथ ऋषि, गन्धर्व, अप्सरा, नाग, यक्ष, राक्षस और देवता भी सूर्यनारायण की उपासना करते हुये चलते हैं। चक्र, शक्ति, पाश और अंकुश इनके मुख्य अस्त्र हैं।

सूर्यदेव का त्रिदेव स्वरूप

सूर्यदेव का श्रेष्ठ रूप जिनका मण्डल ऋग्वेद, तनु- यजुर्वेद और किरणें- सामवेद तथा जो ब्रह्मा, विष्णु और शंकर का रूप है। जो जगत् का उत्पत्ति, रक्षा और नाश के कारण है, अलक्ष्य और अचिन्त्य स्वरूप है।

उदये ब्रह्मणो रूपं मध्याह्ने तु महेश्वरः।
अस्तकाले स्वयं विष्णुस्त्रिमूर्तिश्च दिवाकरः।।

सूर्यदेवः- उदयकाल में- ब्रह्मा के रूप में।
मध्यकाल में- महेश्वर के रूप में।
अस्त के समय में- विष्णु के रूप में।
सूर्यदेव त्रिमूर्ति / त्रिदेव स्वरुप- ब्रह्मा, महेश्वर और विष्णु हैं।

सूर्यदेव अपनी तेज और तीक्ष्ण रश्मियों को सर्वत्र फैलाने के कारण '**विष्णु**' कहे जाते हैं।

जगत् की समस्त घटनाएँ सूर्यदेव का ही लीला-विलास हैं। एक ओर जहाँ भगवान् सूर्य अपनी कर्म-सृष्टि-रचना की लीला से प्रातःकाल में जगत् को संजीवनी प्रदान कर प्रफुल्लित करते हैं वहीं दूसरी ओर मध्याह्नकाल में स्वयं ही अपने महेश्वर-स्वरूप से तमोगुणी लीला करते हैं। मध्याह्नकाल में आप अपनी ही प्रचण्ड रश्मियों के द्वारा शिवरूप से सम्पूर्ण दैनिक कर्म-सृष्टि की रजोगुणरूपी कालिमा का शोषण करते हैं। जिस प्रकार परमात्मा अपनी ही बनायी सृष्टि का आवश्यकतानुसार यथासमय अपने में ही विलय करते हैं, ठीक उसी प्रकार भगवान् आदित्य मध्याह्नकाल में अपनी ही रश्मियों द्वारा महेश्वररूप से सृष्टि के दैनिक विकारों को शोषित कर कर्म-जगत् को हृष्ट-पुष्ट, स्वस्थ और निरोग बनाते हैं। किं बहुना जगत्-कल्याण के लिये भगवान् सूर्य की यह दैनिक विकार-शोषण की लीला ही भगवान् नीलकण्ठ के हलाहलपान का प्रतीक है। दिनभर सारे जगत् में प्रकाश और आनन्द बिखेरकर सांध्यवेला में अस्ताचल की ओर जाने वाले भगवान् भास्कर का सौन्दर्य भी अद्भुत है।

सूर्यदेव के अधीन ही काल-विभाजन है। वे ही संसार की सृष्टि, स्थिति तथा संहारक है। अतः सूर्यदेव ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव स्वरूप त्रिदेव हैं।

ऋग्वेद में वर्णित है कि सूर्यदेव ही अपने तेज से सबको प्रकाशित करते हैं।

यजुर्वेद में कहा है- सूर्यदेव ही सम्पूर्ण जगत् को उज्जीवित करते हैं।

अथर्ववेद में उल्लिखित है कि सूर्यदेव ही सर्व-रोग हर्ता हैं। हृदय की दुर्बलता, हृदय रोग और कास रोग (कुष्ठ) को प्रशमित करते हैं। सूर्य किरणें खारे पानी के समुद्र जल को स्वयं पीकर वर्षा द्वारा पीने योग्य बना देती हैं।

भारत का त्रिदेव स्वरूप

भारत के पूर्व में कोणार्क का सूर्य मन्दिर है, पश्चिम में मोंडेरा का सूर्य मन्दिर है, उत्तर में कश्मीर का मार्तण्ड मन्दिर है, दक्षिण में कोई सूर्य मन्दिर नहीं है। लेकिन वहाँ के लोग सूर्य पूजा करते हैं। बेलगाँव कर्नाटक में १६०० ई. में स्थापित पुरानी सूर्यनारायण की भव्य मूर्ति है। मन्दिर में प्रतिदिन सूर्य-सूक्त का नियमित पाठ होता है। हनुमज्जयन्ती के दिन हनुमानजी की पालकी सूर्यनारायण के सामने आती है। सूर्य-मूर्ति के दाहिने बाजू में 'जय' और बायें बाजू में विजय की प्रतिमायें हैं। मूर्ति के नीचे पीठ पर मध्य में सूर्यदेव का मुख है। दोनों बाजुओं को मिलाकर सात घोड़ों (अश्वों) का मुख है।

भारत में चौथी, पाँचवीं शताब्दी से बारहवीं शताब्दी तक सूर्य पूजा का अधिक महत्व व प्रचार था। वही त्रिदेव ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर की मूर्ति है। जिसे भारत सरकार स्वतंत्रता के बाद पोस्टकार्ड पर त्रिमूर्ति का चित्र अंकित कर डाक विभाग ने प्रसार किया था।



अध्याय- ५

ज्योतिर्लिङ्ग सूर्य

(बारह रूप, महालिङ्ग, एकलिङ्ग)

लिङ्ग का स्वरूप 'लीनम् अर्थं गमयति इति लिङ्गम्' इस व्युत्पत्ति से हेतु कार्य और गमन आदि है। सृष्टि की रचना लिङ्ग द्वारा होती है।

सृष्टि के इन अनंत लिङ्ग में एक ज्योतिर्लिङ्ग है और वह हैं सूर्यदेव। ज्योतिर्लिङ्गरूपी सूर्य भिन्न-भिन्न १२-प्रकार की ज्योतियों में समाविष्ट हैं। अतः ज्योतिर्लिङ्गों की संख्या भी बारह ही है। यह ज्योतिर्धन सूर्यमण्डल अपने अन्तर्यामी अक्षर का अनुमापक होने से भी लिङ्ग है और ज्योतिरूप होने से 'ज्योतिर्लिङ्ग' है।



एक ही परमात्मा के दो रुप हैं:- १. रुद्रलिङ्ग २. शिवलिङ्ग।

१. सूर्यमण्डलरूप ज्योतिर्लिङ्ग रुद्र का लिङ्ग है। सूर्य में रुद्र प्राणों के परस्पर संघर्ष से उत्ताप उत्पन्न होता है। इनका दर्शन अग्नि में होता है। यह लिङ्ग रुद्र स्वरुप है अतः रुद्र का लिङ्ग है।

२. शिवलिङ्ग शिवता (सौम्यता) के साथ जो शिवभाव से दर्शन होते हैं, शिवरुप सोम हैं, यह शिवलिङ्ग हैं।

एक ही परमात्मा के रुद्र और शिव दोनों ही रूप है, अतः जो शिवलिङ्ग है, वह रुद्रलिङ्ग भी है। दोनों एक ही लिङ्ग है (केवल रूप अलग-अलग है)।

भगवान् सूर्य में ५५-रुद्र समाहित है अतः सूर्यदेव एक लिङ्ग हैं। इस एक लिङ्ग में विश्व के समस्त पदार्थ समाये हुये हैं।

राजस्थान में एकलिङ्गजी की प्रतिमा है। जो तेजोमय हैं, अतिउग्र हैं, अतिभीषण (भैरव) हैं। यह सबको तत्क्षण भस्म कर दें, यदि इनके चारों ओर जल का परिभ्रमण न हो। चारों ओर से जल से अभिषिक्त होकर यह रुद्र ही साम्ब (सजल) बनकर शान्त होने से शिवरूप में परिणत हो जाते हैं। शिवलिङ्ग उग्र होने के कारण उन्हें शान्त और सौम्य (सोम) करने के लिए जल की धारा प्रवाहित की जाती है। रुद्राभिषेक यज्ञ में मानव जाति अपने कल्याण हेतु अपनी सामर्थ्य के अनुसार जलाभिषेक या दुग्धाभिषेक करते हैं। रुद्ररूप को सौम्यरूप में रखते हैं जो कल्याणकारी है। इनके मस्तक पर प्राणरूप सत्य ब्रह्मा हैं और नीचे अनंत रूप विष्णु हैं। इसलिए यह एक ही मूर्ति ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर के रूप में त्रिदेव हैं। तीन देवों से युक्त इस एक मूर्ति को ब्रह्माण्ड कहते हैं। यही सम्पूर्ण विश्व हैं।

लिङ्ग शब्द से केवल शिवलिङ्ग का ही बोध होता है, यह एक भ्रम है। देवताओं की सब मूर्तियों को भगवान् कृष्ण ने लिङ्ग कहा है। महाभागवत में आदि शंकराचार्य ने भी विष्णु मूर्ति के लिए कहा है- **'परब्रह्मलिङ्गं भजे पाण्डुरङ्गम्'**। यह ब्रह्मस्वरूप ही महालिङ्ग है।

बारह ज्योतिर्लिङ्ग- यह सूर्य-ज्योति बारह प्रकार की हैं। इसलिए ज्योतिर्लिङ्ग भी बारह हैं। यह सूर्यमण्डल जिस अमूर्त अक्षर का लिङ्ग है। वह अमृत अक्षर इसमें विराजमान है, इसलिए उपनिषदों में अक्षर को अन्तर्यामी कहा गया है। अतः सूर्यमण्डल में लिङ्ग प्रतिष्ठित है।

आदित्य सूर्य संख्या में बारह हैं- १. शक्र(इन्द्र), २. अर्यमा, ३. धाता, ४. त्वष्टा, ५. पूषा, ६. विवस्वान्, ७. सविता, ८. मित्र, ९. वरूण, १०. अंशु, ११. भग, १२. विष्णु।

महाभारत में इन्हीं बारह सूर्यों की मान्यता है।

(महाभारत- १/६३/३६)

सूर्यदेव के बारह रूप

सौर पुराणों में सूर्य को सर्वश्रेष्ठ देव कहा गया है और सभी देवताओं को इन्हीं का स्वरूप कहा गया है। पुराणों के अनुसार सूर्यदेव बार-बार जीवों की सृष्टि और संहार करते हैं। यह पितरों और देवताओं के भी देवता हैं। सूर्यदेव समस्त चराचर जगत् के माता, पिता और गुरू हैं।

सूर्यदेव के बारह रूपों में इन्द्र देवताओं के राजा है, धाता प्रजापति हैं, पर्जन्य जल बरसाते हैं, त्वष्टा वनस्पतियों और औषधियों में विद्यमान है, पूषा अन्न में स्थित हैं और प्रजा का पालन-पोषण करते हैं, अर्यमा वायु के माध्यम से सभी देवताओं में स्थित हैं,

विवस्वान् अग्नि में स्थित हैं जो जीवों के खाये हुये भोजन को पचाते हैं, **भग** सभी देह-धारियों के शरीर में स्थित हैं, **विष्णु** धर्म की स्थापना के लिए अवतार लेते हैं, **अंशुमान** वायु में प्रतिष्ठित होकर प्रजा को आनन्द प्रदान करते हैं, **वरूण** जल में स्थित होकर प्रजा की रक्षा करते हैं तथा **मित्र** सबलोक के मित्र हैं।



१. धाता (चैत्र)



२. अर्यमा (वैशाख)



३. मित्र (ज्येष्ठ)



४. वरुण / अरुण (आषाढ़)

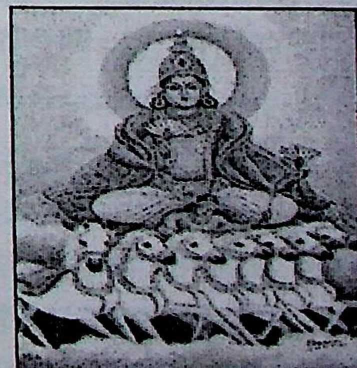

५. इन्द्र (श्रावण)


६. विवस्वान (भाद्रपद)


७. पूषा (अश्विन)


८. परजन्य आदित्य (कार्तिक)


९. अंशुमान (मार्गशीर्ष)


१०. भग (पौष)



११. त्वष्टा (माघ)



१२. विष्णु (फाल्गुन)

सूर्य का उपयुक्त वैशिष्टय उन्हें अतिशय लोकप्रिय बना देता है।

सूर्यदेव की उपासना बारह महिनों में इन्हीं बारह नामों से होती है।

१. मधु (चैत्र) में धाता, २. माधव (वैशाख) में अर्यमा, ३. शुक्र (ज्येष्ठ) में मित्र, ४. शुचि (आषाढ़) में वरूण, ५. नभ (श्रावण) में इन्द्र, ६. नभस्य (भाद्रपद) में विवस्वान्, ७. तपः (अश्विन) में पूषा, ८. तपस्य (कार्तिक) में क्रतु, ९. सह (मार्गशीर्ष) में अंशु, १०. पुण्य (पौष) में भग, ११. इष (माघ) में त्वष्ट, १२. उर्ज (फाल्गुन) में विष्णु।

यही सूर्यदेव का उपासना क्रम है। (विष्णु पुराण- २/१०/३-१८)



अध्याय- ६

भारत के ज्योतिर्लिङ्गों के द्वादश तीर्थ

सौराष्ट्रे सोमनाथं च श्रीशैले मल्लिकार्जुनम्।
उज्जयिन्यां महाकालमोङ्कारममरेश्वरम्।।
केदारं हिमवत्पृष्ठे डाकिन्यां भीमशङ्करम्।
वाराणस्यां च विश्वेशं त्र्यम्बकं गौतमीतटे।।
वैद्यनाथं चिताभूमौ नागेशं दारुकावने।
सेतुबन्धे च रामेशं घुश्मेशं च शिवालये।।
द्वादशैतानि नामानि पप्रातरुत्थाय यः पठेत्।
सप्तजन्मकृतं पापं स्मरणेन विनश्यति।।
एतेषां दर्शनादेव पातकं नैव लिष्ठति।
कर्मक्षयो भवेत्तस्य यस्य तुष्टो महेश्वरः।।

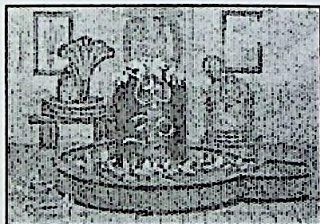
(शिवपु०ज्ञा०सं०अ०-३८)

१. सौराष्ट्र-प्रदेश में **श्रीसोमनाथ**, २. श्रीशैलपर **श्रीमल्लिकार्जुन**, ३. उज्जयिनी में **श्रीमहाकाल**, ४. (महाराष्ट्र में नर्मदा-तट पर) **श्रीओंकारेश्वर / अमलेश्वर**, ५. हिमाच्छादित केदारखड में **श्रीकेदारनाथ**, ६. आसाम के डाकिनी स्थान में **श्रीभीमशङ्कर**, ७. काशी में **श्रीविश्वनाथ**, ८. महाराष्ट्र में गौतमी (गोदावरी) तटपर **श्रीत्र्यम्बकेश्वर**, ९. बिहार के चिताभूमि में **श्रीवैद्यनाथ**, १०. गुजरात के दारुकावन में **श्रीनागेश्वर**, ११. द. भारत में सेतुबन्धपर **श्रीरामेश्वर** और १२. बेलगांव में **श्रीघुश्मेश्वर** ये द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग हैं।

जिनका बड़ा माहात्म्य है। जो कोई नित्य प्रातःकाल उठकर इन नामों का पाठ करता है, उसपर भगवान् शङ्कर प्रसन्न होते हैं तथा उनके सात जन्मों तक के पाप का विनाश कर देते है। भगवान् शङ्कर

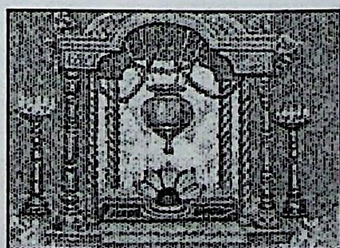
और सूर्य दोनों का अभेद प्रतिपादन भी शास्त्रों में है। परम्परा में प्राप्त ज्योतिर्लिङ्गों में बारह तीर्थ हैं।

१. <u>श्री सोमनाथ-</u> यह ज्योतिर्लिङ्ग गुजरात प्रान्त के काठियावाड़ क्षेत्र में सोमनाथ मन्दिर में स्थापित है। जो प्रभास क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। यहीं भगवान् श्रीकृष्ण ने जरा नामक व्याध के वाण को निमित्त बनाकर अपनी लीला का संवरण किया था। चन्द्रमा का



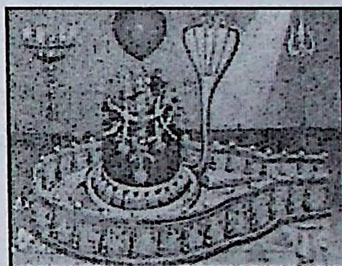
एक नाम सोम भी है। चन्द्रदेव ने भगवान् शिव को ही अपना नाथ-स्वामी मानकर यहाँ तपस्या की थी। अतः इस ज्योतिर्लिङ्ग को सोमनाथ कहा जाता है। इनके दर्शन, पूजन, अराधना से भक्तों के जन्म-जन्मान्तर के सारे पाप और दुष्कृत्य नष्ट हो जाते हैं। मोक्ष का मार्ग उनके लिए सहज ही सुलभ हो जाते हैं। उनके लौकिक-परलौकिक सारे कृत्य सत्यमेव अपने आप सफल हो जाते हैं।

२. <u>श्रीमल्लिकार्जुन</u>- यह ज्योतिर्लिङ्ग आन्ध्र-प्रदेश में कृष्णा नदी के तट पर श्रीशैल पर्वत पर स्थित है। महाभारत, शिवपुराण तथा पद्मपुराण आदि धर्मग्रन्थों में इसकी महिमा और महत्ता का विस्तार से वर्णन किया गया है। इस मल्लिकार्जुन-शिवलिङ्ग तीर्थ क्षेत्र



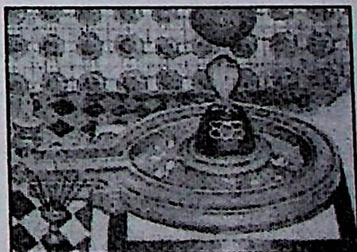
की पुराणों में अत्यधिक महिमा बताई गई है। इस शिवलिङ्ग का दर्शन, पूजन, अर्चन करने वाले भक्तों की सभी सात्विक मनोकामना पूर्ण हो जाती हैं।

३. **श्रीमहाकालेश्वर**- यह ज्योतिर्लिङ्ग मध्य-प्रदेश के उज्जैन नगर में है। पूण्यसलिला शिप्रा नदी के तट पर अवस्थित है। यह उज्जैन प्राचीनकाल में उज्जैनी नाम से विख्यात है। इसे अवन्तिकापुरी भी कहते हैं। यहाँ के राजा विक्रमादित्य थे, जिनके नाम से विक्रमी सम्वत् का शुभारम्भ हुआ है।



यह भारत की परम पवित्र सप्तपुरियों में से एक है। यहाँ पर भगवान् शङ्कर प्राणियों का कल्याण करने हेतु प्रकट हुये थे। उनके हुंकार मात्र से दारूण नामक अत्याचारी दानव जलकर भस्म हो गया था। भगवान् यहाँ हुंकार सहित प्रकट हुये थे, इसलिए उनका नाम महाकाल पड़ गया। इस पवित्र ज्योतिर्लिङ्ग को श्रीमहाकालेश्वर के नाम से जाना जाता है।

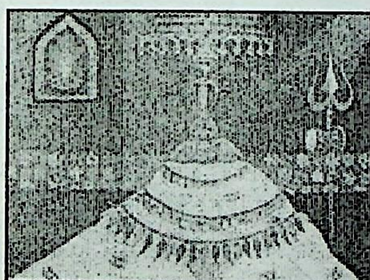
४. **श्रीओंकारेश्वर (श्रीअमलेश्वर)**- यह ज्योतिर्लिङ्ग पवित्र नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। इस स्थान पर नर्मदा के दो भागों में विभक्त हो जाने से बीच में एक टापू- सा बन गया है। इस टापू को मान्धाता पर्वत या शिवपुरी कहते हैं। नदी की एक



धारा इस पर्वत के उत्तर और एक दक्षिण की ओर बहती है। दक्षिण वाली धारा को मुख्य धारा मानते हैं। इसी मान्धाता पर्वत पर श्रीओंकारेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग का मन्दिर स्थित है। ओंकारेश्वर शिवलिङ्ग मनुष्य निर्मित नहीं है स्वयंभू हैं। स्वयं प्रकृति ने इनका निर्माण किया है। इनके चारों ओर हमेशा जल भरा रहता है।

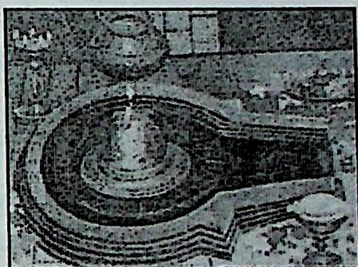
इस ओंकारेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग के दो स्वरूप हैं। एक को अमलेश्वर तथा दूसरे को ओंकारेश्वर के नाम से जाना जाता है। यह ज्योतिर्लिङ्ग नर्मदा नदी के दक्षिण तट पर श्रीओंकारेश्वर से थोड़ी दूर हटकर है। पृथक होते हुये भी दोनों की गणना एक ही में की जाती है। लौकिक-परलौकिक दोनों प्रकार के उत्तम फल, अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष सहज ही सुलभ हो जाते हैं।

५. **श्रीकेदारनाथ (श्रीकेदारेश्वर)**- यह ज्योतिर्लिङ्ग पर्वतराज हिमालय की केदार नामक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है। इस चोटी के पश्चिम भाग में पुण्यमति मन्दाकिनी नदी के तट पर स्थित केदारेश्वर महादेव का मन्दिर है। इस चोटी के पूर्व में अलकनन्दा नदी के सुरम्य तट पर बद्रीनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर है। अलकनन्दा और मन्दाकिनी ये दोनों नदियाँ नीचे रूद्र-प्रयाग में आकर मिल जाती हैं। यह दोनों संयुक्त धारा और नीचे देव-प्रयाग में आकर भागीरथी गंगा से मिल जाती हैं। केदार नामक हिमालय शृंग पर अवस्थित होने के कारण इस ज्योतिर्लिङ्ग को श्रीकेदारेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग के नाम से जाना जाता है। इनके दर्शन, पूजन तथा स्नान करने से भक्तों को लौकिक फलों की प्राप्ति होती है।

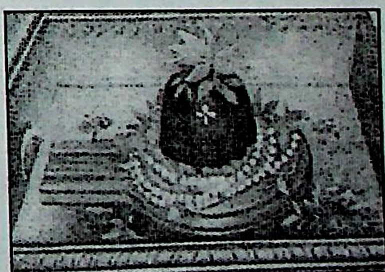


६. **श्रीभीमेश्वर**- यह ज्योतिर्लिङ्ग आसाम-प्रदेश के गोहाटी के निकट ब्रह्मपुर पहाड़ी पर अवस्थित है। प्राचीनकाल में भीम नामक महाप्रतापी राक्षस अपनी माता के साथ कामरूप प्रदेश में रहता था। भीम राक्षसराज रावण के छोटे भाई कुम्भकर्ण का पुत्र था। कामरूप नरेश सुदक्षिण शिवभक्त थे। भीम के बन्दीगृह में राजा सुदक्षिण अपने

सामने पार्थिव शिवलिङ्ग रखकर पूजा–अर्चना कर रहे थे तभी भीम ने क्रोधित होकर पार्थिव शिवलिङ्ग पर प्रहार कर दिया। शिवलिङ्ग पर तलवार स्पर्श होने के पूर्व ही भूत-भावन शङ्कर जी प्रकट हुये, उनके हुंकार मात्र से ही भीम राक्षस जलकर भस्म हो गया। तभी से यह क्षेत्र परम पवित्र पुण्यक्षेत्र बन गया तथा यह ज्योतिर्लिङ्ग भीमेश्वर के नाम से विख्यात हो गया। यहाँ पर श्रद्धालुओं की सभी मनोकामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं।

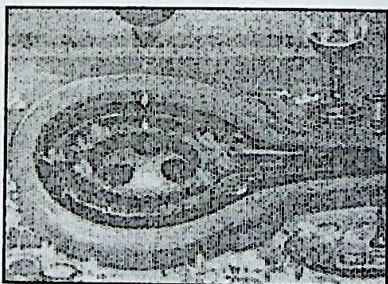


७. **श्रीविश्वेश्वर**- यह ज्योतिर्लिङ्ग उत्तर भारत के उत्तर-प्रदेश की प्रसिद्ध नगरी काशी में स्थित है। प्रलयकाल में भी इस नगरी का लोप नहीं होता है। यह नगरी तीनों लोकों से न्यारी पवित्रपावनी, मोक्ष दायनी गंगा नदी के तट पर अवस्थित है। इस नगरी की महिमा ऐसी है कि जो प्राणी अपने प्राण का त्याग यहाँ करता है उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है। यहाँ भगवान् शंङ्कर स्वयं उसके कान में तारक मन्त्र का उपदेश देते हैं। इस मन्त्र के प्रभाव से पापी से पापी प्राणी भी मोक्ष को प्राप्त करता है। विश्वेश्वर के आनन्द-कानन में दशाश्वमेध घाट, लोलार्क कुण्ड, बिन्दुमाधव (पंचगंगा घाट), केशव (आदिकेशव घाट) वरूणा गंगा संगम तट पर एवं मणिकर्णिका घाट (महाश्मशान) ये महातीर्थ हैं। इसलिए इसे 'अविमुक्त क्षेत्र' कहा जाता है। इस नगरी के उत्तर में ॐकारखण्ड, दक्षिण में केदारखण्ड और

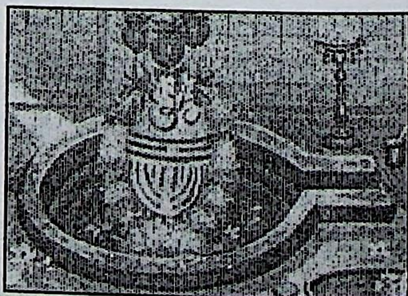


बीच में विश्वेश्वरखण्ड ज्ञानवापी क्षेत्र है। यहीं प्रसिद्ध विश्वेश्वर ज्योतिर्लिङ्ग स्थित है। इस ज्योतिर्लिङ्ग के दर्शन, पूजन मात्र से मनुष्य अपने समस्त पापों, तापों से छुटकारा पा जाता है।

८. **श्रीत्र्यम्बकेश्वर**- यह ज्योतिर्लिङ्ग महाराष्ट्र प्रान्त के नासिक शहर से ३०-किलोमीटर पश्चिम में अवस्थित है। महर्षि गौतम अपनी पत्नी अहिल्या के साथ तल्लीन होकर शिव अराधना की। प्रसन्न होकर शिवजी प्रकट हुये और वर दिया। महर्षि गौतम ने भगवान् शङ्कर से सदा के लिए निवास करने की प्रार्थना की। उनकी बात मानकर श्रीत्र्यम्बक ज्योतिर्लिङ्ग के नाम से स्थित हो गय। गौतम ऋषि द्वारा लायी गयी गंगाजी भी वहीं पास में गोदावरी नाम से प्रवाहित होने लगीं। यह ज्योतिर्लिङ्ग समस्त पुण्यों को प्रदान करने वाला है। यह शिवलिङ्ग तीन भाग में त्र्यम्बकेश्वर हैं।



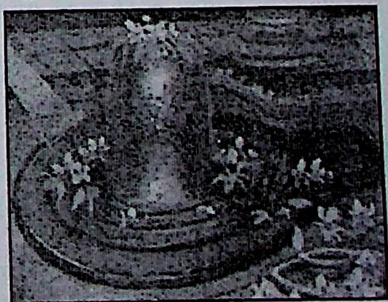
९. **श्रीवैद्यनाथ**- यह ज्योतिर्लिङ्ग बिहार प्रान्त के सन्थाल परगना में (जरसीडीह रेलवे स्टेशन के पास) भागलपुर जिले में स्थित है तथा वैद्यनाथ धाम से प्रसिद्ध हैं। इस तीर्थ की महिमा का वर्णन शास्त्रों में किया गया है। इसकी स्थापना के विषय में एक कथा प्रचलित है कि एक बार राक्षसराज रावण ने हिमालय पर जाकर भगवान् शिव का दर्शन प्राप्त करने के लिए घोर तपस्या की। दशानन ने एक-एक करके



अपने सिर काटकर शिवलिङ्ग पर चढ़ा डाले, जब दशवाँ और अन्तिम सिर काटकर चढ़ाने को हुआ तभी भगवान् शङ्कर अति प्रसन्न होकर प्रकट हुये और वर माँगने को कहा- महाज्ञानी, गुणी रावण ने शिवजी से उस लिङ्ग को लंका ले जाने का वर माँगा। शिवजी ने यह कहा कि यह लिङ्ग सीधे लंका ले जाकर रखना, अगर कहीं रास्ते में रख दिया तो वहीं अचल हो जायेगा। किन्हीं कारणों से रावण रास्ते में ही शिवलिङ्ग को रख दिया और शिवलिङ्ग वहीं स्थापित हो गये। यह शिवलिङ्ग ग्यारह अँगुल ऊंचा है। इसके ऊपर अँगूठे के आकार का गडढा है। यह वही निशान है जिसे रावण ने अपने अँगूठे से बनाया था।

रोग मुक्ति के लिए इस ज्योतिर्लिङ्ग की बहुत प्रसिद्धि है। जो इस शिवलिङ्ग का दर्शन करता है, रोग मुक्त हो जाता है तथा समस्त पापों से छुटाकारा पा जाता है।

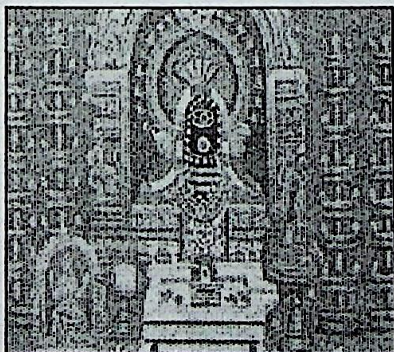
१०. <u>श्रीनागेश्वर</u>- यह ज्योतिर्लिङ्ग गुजरात प्रान्त के द्वारकापुरी से



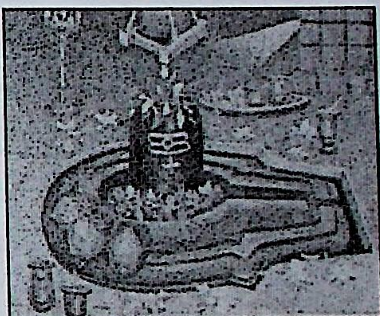
लगभग सोलह किलोमीटर दूर स्थित है। इस ज्योतिर्लिङ्ग के सम्बन्ध में पुराणों में वर्णन है कि सुप्रिय नामक एक बड़ा धर्मात्मा और सदाचारी वैश्य था। निरन्तर शिव आराधना, पूजन और ध्यान में लीन रहता था। दारूक नामक एक राक्षस इसकी शिव-भक्ति से बड़ा क्रुद्ध रहता था। उसने सुप्रिय वैश्य को नौका में यात्रा करते समय उसके सभी साथियों के साथ पकड़कर अपनी राजधानी में लाकर कैद कर दिया। सुप्रिय करागार में भी नियमितरूप से भगवान् शिव की पूजा, आराधना करते थे। राक्षस शिव भक्त सुप्रिय वैश्य को मारने का

आदेश दे दिया। सुप्रिय एकनिष्ठ भाव से भगवान् शिव को पुकारने लगे, प्रार्थना सुनकर भगवान् शङ्करजी करागार में ऊंचे स्थान पर चमकते हुये सिंहासन पर ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में प्रकट होकर, दर्शन देकर अपने पाशुपत्र अस्त्र को सुप्रिय को दिया जिससे राक्षस दारूक का वध करके सुप्रिय शिवधाम चले गये। भगवान् शिवजी के आदेशानुसार ही इस ज्योतिर्लिङ्ग का नाम श्रीनागेश्वर पड़ा। इस पवित्र ज्योतिर्लिङ्ग के दर्शन से मनुष्य सारे दुःखों से छुटकारा पाकर समस्त सुखों का भोग करते हुये भगवान् शिव के धाम को प्राप्त होता है।

११. <u>श्रीसेतुबन्ध रामेश्वर</u>- यह ज्योतिर्लिङ्ग भारत के दक्षिण में तमिलनाडु प्रान्त में रामेश्वर समुद्र तट पर अवस्थित है। इस ज्योतिर्लिङ्ग की स्थापना मर्यादा पुरूषोत्तम भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने की थी। इस विषय में ऐसी कथा है कि भगवान् श्रीरामचन्द्रजी ने लंका पर चढ़ाई करने जा रहे थे। तब इसी स्थान के समुद्र तट पर बालू का शिवलिङ्ग बनाकर पूजन किया था तथा भगवान् शिव से रावण पर विजय प्राप्त करने का वर माँगा था। भगवान् शिव ने प्रसन्नता पूर्वक यह वर भगवान् श्रीराम को दिया तथा लोक-कल्याणार्थ ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में वहाँ विराजमान हो गये। (इस विषय की महिमा का वर्णन विस्तार से स्कन्दपुराण में वर्णित है)



१२. <u>श्रीघुश्मेश्वर</u>- द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग तीर्थ में अन्तिम बारहवां ज्योतिर्लिङ्ग है। इसे घुश्मेश्वर, घुसृणेश्वर या घृष्णेश्वर भी कहा जाता है। यह महाराष्ट्र प्रदेश में दौलताबाद से १२-कि.मी. दूर बेरूलगांव के पास अवस्थित है। इस ज्योतिर्लिङ्ग के बारे में पुराणों में इस प्रकार वर्णित है कि दक्षिण



देश में देवगिरी पर्वत के निकट सुधर्मा नामक तपोनिष्ठ ब्राह्मण रहता था। उसकी दो पत्नी थी- सुदेहा और घुश्मा दोनों सगी बहनें थीं। घुश्मा शिव भक्त और सदाचारिणी स्त्री थी। शिवजी की कृपा से घुश्मा ने एक सुन्दर बालक को जन्म दिया। सुधर्मा ब्राह्मण ने बालक के युवा होने पर उसका विवाह भी कर दिया। लेकिन सुधर्मा की पहली पत्नी सुदेहा के मन में कुविचार रूपी विशाल वृक्ष ने घुश्मा के पुत्र की रात में सोते समय हत्या कर तालाब में फेक दिया। जहाँ घुश्मा शिवजी की प्रतिमा प्रतिदिन पूजा के बाद विसर्जित करती थी। जब घुश्मा प्रतिदिन की भाँति उस दिन भी शिवलिङ्ग तालाब में विसर्जित कर वापस चल पड़ी उसी समय घुश्मा का प्यारा लाल (पुत्र) जल से निकलकर सदा की भाँति चरणों पर गिर पड़ा। तभी शिवजी घुश्मा से प्रसन्न होकर प्रकट हो गये और वर माँगने को कहा- शिवभक्त घुश्मा ने लोक कल्याणार्थ कहा आप इस स्थान पर सदा-सर्वदा के लिए निवास करें। यहीं भगवान् शिवजी ज्योतिर्लिङ्ग के रूप में प्रकट होकर वहीं निवास करने लगे। शिवभक्ता घुश्मा के आराध्य होने के कारण यह स्थान घुश्मेश्वर के नाम से विख्यात हैं। इनका दर्शन लोक-परलोक दोनों के लिए अमोघ फलदायी है।

अध्याय- ७

काशी की द्वादश आदित्योपासना पीठ

काशी खण्ड में बारह आदित्यपीठों की उल्लेख मिलता है। इसके अनुसार जगत के नेत्र सूर्य स्वयं बारह रूपों में विभक्त होकर काशीपुरी में व्यवस्थित हुये। इनका उद्देश्य अपने तेज से नगर की रक्षा करना है।

इति काशीप्रभावज्ञो जगच्चक्षुस्तमोनुदः।
कृत्वा द्वादशधात्मानं काशिपुर्यां व्यवस्थितः।।
लोलार्क उत्तरार्कश्च साम्बादित्यस्तथैव च।
चतुर्थो द्रुपदादित्यो मयूखादित्य एव च।।
खखोल्कश्चारुणादित्यो वृद्धकेशवसंज्ञकौ।
दशमो विमलादित्यो गङ्गादित्यस्तथैव च।।
द्वादशश्च यमादित्यः काशिपुर्यां घटोद्भव।
तमाऽधिकभ्यो दुष्टेभ्यः क्षेत्रं रक्षन्त्यमी सदा।।

(काशी खण्ड- ४६/४९)

१. लोलार्क, २. उत्तरार्क, ३. साम्बादित्य, ४. द्रुपदादित्य, ५. मयूखादित्य, ६. खखोल्कादित्य, ७. अरुणादित्य, ८. बृद्धादित्य, ९. केशवादित्य, १०. विमलादित्य, ११. गङ्गादित्य, १२. यमादित्य।

काशी में प्रधानतया शिव की उपासना की जाती है। यह अविमुक्त क्षेत्र है। द्वादश ज्योतिर्लिङ्गों में एक विश्वेश्वर नामक शिव का पूजा स्थल है। कहा जाता है कि भगवान् शङ्कर के त्रिशूल पर बसी काशी नगरी कभी ध्वस्त नहीं होती। काशी खण्ड में विशेष रूप से काशी में शिवपीठ, देवीपीठ, विष्णुपीठ, विनायकपीठ, भैरवपीठ,

षडाननपीठ और आदित्यपीठ आदि अनेक देव स्थान हैं, जहाँ भक्तगण पूजा-अर्चना में संलग्न रहते हैं।

आदित्योपासना का मुख्य उद्देश्य स्वास्थ्य की रक्षा करना है, विशेषतया रक्तदोषजनित रोगों का शमन करना है। अतः रविवार के व्रत में नमक, उष्ण जल एवं दूध वर्जित है। शास्त्रों में सूर्योदय से पहले शीतल जल से स्नान करके पूजन करने का विधान है। काशी के आदित्योपासना के द्वादशपीठों में लोलार्क का वर्णन '**कृत्यकल्पतरु**' में प्राप्त होता है। आदित्यपीठों में लोलार्क का स्थान सर्वप्रमुख है। वामन पुराण में भी कहा गया है- काशी के तीन देवता हैं-
१. अविमुक्तेश्वर, २. केशव, तथा ३. लोलार्क।

१. लोलार्क- यह आदित्यपीठ काशी के आदित्यपीठों में सबसे श्रेष्ठ है। इससे सम्बद्ध एक कुण्ड भी है जो लोलार्क कुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। अस्सी-संगम के समीप तुलसी घाट के नजदीक होने से इस लोलार्क कुण्ड का जल गङ्गा में मिलते हुये उत्तरवाहिनी गङ्गा के तटीय अन्य तीर्थों में पहुँचता है। प्राचीन काल में लोलार्क कुण्ड का संगम गङ्गा से होता था। वर्तमान में यह कुण्ड ऊँचे स्थान पर है, इसका जल केवल वर्षा ऋतु में एक सुरंग द्वारा गङ्गा में पहुँचता है।

'लोलार्क' नामकरण के सम्बन्ध में वामनपुराण में वर्णित है- सुकेशिचारित उपाख्यान अविस्मरणीय है तदनुसार भगवान् शङ्कर ने क्रुद्ध होकर सूर्य को आकाश से गिरा दिया। सूर्य के काशी में नीचे गिरते ही स्वयं ब्रह्मा और इन्द्र अन्य देवताओं के साथ मन्दराचल पर्वत पर चले गये, वहाँ भगवान् शङ्कर को प्रसन्न करके पुनः काशी में ले आये। इस प्रकार भगवान् शिव ने प्रसन्न होकर अपने हाथ से उठाकर उनका नाम लोलार्क रखकर रथ पर बैठाया।

काशी खण्ड में यही कथा दूसरी तरह वर्णित है। धर्मनिष्ठ काशीराज देवोदास को धर्मच्युत कर वाराणसी नगर उनके हाथ से छीन लेने के लिए भगवान् शङ्कर ने योगिनियों को भेजा था। वे इस कार्य में असफल रहीं। अन्त में शिव ने सूर्य को भेजा, लेकिन अनेकों रूप धारण करने पर भी वे असफल रहे। प्रथम रूप लोलार्क का धारण किया। काशी की विशालता, राजा की धर्मनिष्ठा से तथा शिव के कोप से बचे रहने के लिए वे लोलार्क कहलाये और यहीं स्थिर हो गये। लोलार्क कुण्ड भी उसी नाम से प्रसिद्ध हुआ।

मार्गशीर्षस्य सप्तम्यां षष्ठ्यां वा रविवासरे।
विधाय वार्षिकीं यात्रां नरः पापैः प्रमुच्यते।।

(का०ख०अ०-४६)

मार्गशीर्ष शुक्ला षष्ठी/सप्तमी रविवार योग होने पर लोलार्क दर्शन व कुण्ड में स्नान का विशेष महत्व है। यहाँ की वार्षिक यात्रा भाद्रपद शुक्ला षष्ठी को सम्पन्न होती है। व्याधिग्रस्त स्त्री-पुरुष एवं निःसंतान स्त्रियां लोलार्क षष्ठी के दिन लोलार्क कुण्ड में स्नान करके गीले वस्त्र वहीं छोड़ देती हैं और अर्चना-वन्दना कर इच्छित वरदान माँगती हैं।

प्रत्यर्कवारं लोलार्कं यः पश्यति शुचिव्रतः।
न तस्य दुःखं लोकेऽस्मिन् कदाचित् सम्भविष्यति।।

(का०ख०अ०-४६ / ५६)

सूर्यपीठ होने के कारण प्रत्येक रविवार को भी पूजन का माहात्म्य है। लोलार्क तीर्थ को काशी का नेत्र माना गया है। यह तीर्थ नगर के दक्षिण भाग में स्थित होने के कारण दक्षिण भाग का रक्षक

कहा गया है। दक्षिण से प्रवेश करने वाले समस्त पापों का यह तीर्थ अवरोध करता है। नगर के दक्षिण भाग की विशेषता गङ्गा अस्सी संगम के साथ लोलार्क की स्थिति के कारण अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

२. <u>उत्तरार्क</u>- काशी की उत्तरी सीमा पर सूर्यपीठ उत्तरार्क है, इससे सम्बद्ध जलाशय उत्तरार्क कुण्ड कहलाता है। इसकी वर्तमान स्थिति पूर्वोत्तर रेलवे स्टेशन अलईपुर (वाराणसी सिटी रेलवे स्टेशन) के समीप है। मुसलमानों के आधिपत्य क्षेत्र होने से सूर्यपीठ नष्ट हो गया है, तब से अब तक पुनः निर्माण नहीं हुआ है, उत्तरार्क की मूर्ति भी लुप्त है। वर्तमान में केवल उस स्थान की पूजा होती है। अब इस स्थान पर मस्जिद-मजार बने हुये हैं। इन भवनों में प्रयुक्त पत्थरों पर अंकित चित्रों को देखकर प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में यहाँ मन्दिर और विहार था जो आजकल बकरिया कुण्ड के नाम से जाना जाता है। दोषीपुरा मुहल्ला है जहाँ ज्येष्ठ मास के रविवारों को गाजीमियां का मेला लगता है।

आदित्य पुराण में उत्तरार्क का माहात्म्य बड़े विस्तार से है। उसके अनुसार जाम्बवती के पुत्र साम्ब ने अपने पिता कृष्ण से यह निवेदन किया कि सूर्योपासना का ऐसा उपाय बतलायें कि लोग व्याधि निर्मुक्त होकर सुखी जीवन व्यतीत करें। क्योंकि मैने सूर्य की अर्चना कर महारोग (चर्म रोग) से मुक्ति पायी है। श्रीकृष्ण ने कहा वाराणसी में उत्तरार्क विशेष रूप से व्याधिनाशक है।

दैत्यों द्वारा देवताओं को पराजित किये जाने पर अदिति के गर्भ से मार्तण्ड उत्पन्न हुये। सब देवों के मित्र होने के कारण उन्हें

मित्र भी कहा जाता है। वे ही सूर्य, ज्योतिष, रवि और जगच्चक्षु आदि नामों से पुकारे जाते हैं। दुःखी देवताओं की प्रार्थना सुनकर सूर्यदेव ने दानवों का संहार करने के लिए दृढ़ एवं अजेय शस्त्रों का निर्माण करने के लिए स्वतेज से पूरित शिला को उत्पन्न कर काशी के उत्तर भाग में दक्षिणी तट पर ले जाकर विश्वकर्माजी से उत्तरार्क की दिव्य प्रतिमा बनवायी।

अद्य पौषस्य सप्तम्यामर्कवारे ममोद्भवः।
अभूदुत्तरफाल्गुन्यां नक्षत्रे भगदैवते।।

(आदित्यपुराण)

आदित्यपुराण में उत्तरार्क ने अपनी उत्पत्ति के विषय में कहा कि पौष मास की सप्तमी तिथि, रविवार, उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में मेरा जन्म हुआ है। सूर्यदेव की कृपा से देवों ने वाराणसी में उत्तरार्क के पूर्व में गणेश, दक्षिण में क्षेत्रपाल तथा भैरव और पश्चिम में उत्तर मानसरोवर स्थापित किया। यह 'मानसरोवर' जल रूप में सूर्य की शक्ति 'छाया' मानी गयी है। इनके उत्तर में स्वयं उत्तरार्क हैं। उनकी बायीं ओर 'धर्मकूप' बनवाया गया। सन् ११९४ ई. के बाद कुतुबुद्दीन ऐबक की सेना ने वाराणसी की सेना पर विजय प्राप्त कर राजघाट का किला ढहा दिया और अनेकों मठ-मन्दिरों को विध्वन्स किया। उस समय उत्तरार्क (बकरिया कुण्ड) का मन्दिर भी ध्वस्त किया गया था। बकरिया कुण्ड से प्राप्त गोवर्धनधारी श्रीकृष्ण की गुप्तकालीन विशाल मूर्ति 'भारत कला भवन' काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संग्रहालय में सुरक्षित है।

३. साम्बादित्य- यह स्थान सूर्य कुण्ड (सूरजकुण्ड) के नाम से वाराणसी के गोदौलिया, नई-सड़क, औरंगाबाद क्षेत्र के सनातन धर्म

इण्टर कालेज के बीच पड़ने वाले ध्रुवेश्वर के मन्दिर के नाम से विख्यात है। रविवार को यहाँ भी सूर्य-पूजन का विशेष महत्व है। श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब ने इसकी स्थापना की थी। यहाँ पर सूर्यदेव की आराधना से साम्ब को कुष्ठ रोग से छुटकारा मिला था। आजकल चैत्रमास के रविवारों को इनकी वार्षिक यात्रा सम्पन्न होती है।

मधौ मासि रवेर्वारे यात्रा सांवत्सरी भवेत्।

(का०ख०-४८/५३)

४. <u>द्रुपदादित्य</u>- यह स्थान विश्वनाथ मन्दिर के पास मकान नं.- सी.के.३५/२०, में अक्षयवट के घेरे में विद्यमान है। इनके सामने शनिदेव (शनैश्चरदेवता) का मन्दिर है। पिता (सूर्यदेव) और पुत्र शनि के विग्रह एक ओर आमने-सामने है। काशी खण्ड के अनुसार द्रौपदी ने इनकी स्थापना कर आराधना के फलस्वरूप अक्षय स्थाली प्राप्त हुई थी। उसी के द्वारा वनवास में पाण्डवों की क्षुधा-कष्ट से रक्षा हुई थी। यह अक्षय स्थाली भोजन से कभी भी खाली नहीं होती है 'अक्षयपात्र' है। इस समय उस स्थान पर विद्यमान प्राचीन नटराज की मूर्ति ही द्रौपदी के नाम से पूजी जाती है। विश्वनाथ दर्शन के पूर्व इनका दर्शन शुभावह माना गया है।

विश्वेशाद् दक्षिणे भागे दण्डपाणेः समीपतः।

(का०ख०- ४९/२०-२१)

५. <u>मयूखादित्य</u>- यह स्थान काशी के पंचनद क्षेत्र में यानी पंचगङ्गा घाट कहा जाता है। वहाँ दोनों कुण्ड बालाजी के मन्दिर घाट के पास एक मढ़ी में है। जैसा काशी खण्ड में विस्तारित है-

किरणा धूतपापा च पुण्यतोया सरस्वती।
गङ्गा च यमुना चैव पञ्च नद्योऽत्र कीर्तिताः।।

(का.ख.- ५९/११५)

'किरणा' का कुण्ड बालाजी घाट के पास एक मढ़ी में है इसी प्रकार 'धूतपापा' का कुण्ड भी दुर्गा घाट के समीप महाप्रभुजी की बैठक के नीचे घाट के ऊपर मढ़ी में दिखलाई पड़ता है। कार्तिक मास में प्रातःकाल सूर्योदय के पूर्व पञ्चगङ्गा में गङ्गा स्नान का माहात्म्य है।

मयूख तथा किरण दोनों परस्पर पर्यायवाची शब्द है किरणा नाम मयूखादित्य से सम्बद्ध होने के कारण ही पड़ा है। मयूख का दूसरा पर्याय गभस्ति भी है। अतः सूर्यदेव के द्वारा गभस्तीश्वर की स्थापना कर तपश्चर्या करने का वर्णन काशी खण्ड में है। शिव और मङ्गलागौरी के समक्ष तप करने पर सूर्य ने वरदान प्राप्त किया था।

मयूखादित्य की मूर्ति गभस्तीश्वर के मन्दिर में एक खम्भ के पास स्थापित है। इस मूर्ति के साथ किरणा के अन्तः सलिला का सम्पर्क अवश्य है। मण्डलाकार सूर्य विग्रह जल कणों से सदा आर्द्र ही रहता है। यहाँ प्रत्येक रविवार तथा पौष के रविवारों को पूजन-दर्शन का विशेष माहात्म्य है।

मयूखादित्य की अर्चना से रोग और दारिद्र्य दूर होते हैं। पञ्चनद क्षेत्र का यह प्रसिद्ध देवालय है।

६. <u>खखोल्कादित्य</u>- यह स्थान त्रिलोचन महादेव के समीप कामेश्वर महादेव के पूर्व द्वार पर विद्यमान है। वर्तमान में मछोदरी मुहल्ले से गायघाट के पास त्रिलोचन मुहल्ले में स्थित है। गरुडपुराण में सूर्योपासना के प्रसंग में खखोल्कादित्य के बीज मन्त्र का उल्लेख मिलता है-

ॐ खखोल्काय ॐ नमः (गरुडपुराण अ.- १६)

खखोल्क शब्द का अर्थ- 'सूर्यरूप से आकश में उल्का के समान' अथवा 'इन्द्रियों में आत्मरूप से उल्का के समान' माना गया है।

सारांश यह है कि सूर्य का वाह्यरूप जगत्प्रकाशक होने के कारण एवं शरीर के भीतर ज्योतिःस्वरूप आत्मा की तरह विद्यमान होने से 'खखोल्क' नाम दिया गया है। काशी खण्ड में ऐसा भी वर्णन है कि गरुड की माता विनता ने इनकी स्थापना की थीं, इस कारण विनतादित्य भी कहा जाता है-

'विनतादित्य इत्याख्यः खखोल्कस्तत्र संस्थितः।'

(का.ख.- ५०/१४८)

इनके पूजन-दर्शन से रोगग्रस्त क्षण भर में ही नीरोग हो जाता है।

७. <u>अरुणादित्य</u>- यह स्थान त्रिलोचना महादेव मन्दिर के पार्श्वभाग में विद्यमान है। आदि महादेव के उत्तर में इनका स्थान कहा गया है। सूर्यदेव के सारथी अरुण के द्वारा इनकी स्थापना किये जाने के कारण इनकी प्रसिद्धि 'अरुणादित्य' के नाम से हुई। इनके पूजन से दुःख, दारिद्र्य, व्याधि, शोक, क्लेश आदि से छुटकारा मिलता है।

व्याधिभिर्नाभिभूयन्ते नोपसर्गैश्च कैश्चन।
शोकाग्निना न दह्यन्ते ह्यरुणादित्यसेवनात्।।

(का.ख.अ.- ५१)

८. <u>वृद्धादित्य</u>- वर्तमान समय में इनका स्थान विशालाक्षी गौरी के दक्षिण में मीरघाट पर (डी. ३/१५) भवन में हनुमानजी के मन्दिर के बगल में है। हारीत नामक ऋषि ने अपने बार्धक्य को दूर करने के लिए सूर्य की उपासना की थी। वृद्ध ऋषि के द्वारा अर्चित होने के कारण वृद्धादित्य कहलाये। इनके पूजन से वृद्धावस्था में होने वाले सभी कष्टों से छुटकारा मिलता है। रविवार को इनके पूजन का माहात्म्य है।

बृद्धेनाराधितो यस्माद् हारीतेन तपस्विना।
आदित्यो वार्धकहरो वृद्धादित्यस्ततः स्मृतः।।

(का.ख.अ.- ५१)

९. <u>केशवादित्य</u>- यह स्थान गङ्गा-वरुणा-संगम पर राजघाट, बसंता कॉलेज के उत्तर आदिकेशव मन्दिर में इनकी मूर्ति है। इनकी आराधना से ज्ञान की प्राप्ति होती है। काशी खण्ड में वर्णित है कि भगवान् केशव को शिवजी की आराधना करते देख सूर्यदेव को बड़ा आश्चर्य हुआ। इस पर केशव ने (श्रीकृष्ण ने) शिव की महत्ता का सूर्य को उपदेश दिया। यह स्थान केशवादित्य के नाम से जाना जाता है।

माघ शुक्ला सप्तमी को रविवार पड़ने पर आदिकेशव के समीप **'पापोदक'** तीर्थ में प्रातःकाल में स्नान कर मौन रहकर केशवादित्य के पूजन का बड़ा माहात्म्य है।

अगस्त्ये रथसप्तम्यां रविवारो यदाप्यते।
तदा पादोदके तीर्थे आदिकेशवसन्निधौ।।

(का.ख.- ५१/७६)

१०. <u>विमलादित्य</u>- यह स्थान वर्तमान में जंगमबाड़ी मुहल्ले में खारी कुँआ के निकट डी. ३५/२७३, भवन में विमलादित्य की मूर्ति है। इनके पूजन से शरीर शुद्ध हो सभी व्याधियाँ दूर हो जाती है। इनके दर्शन मात्र से कुष्ठ रोग का शमन होता है।

११. <u>गङ्गादित्य</u>- वर्तमान समय में यह मूर्ति ललिता घाट पर स्थापित है। पुराणों में वर्णित है कि गङ्गादित्य का आविर्भाव काशी में गङ्गाजी के आने के समय हुआ था। प्राचीन काल में इनका स्थान गङ्गाकेशव तथा गङ्गाजी की मूर्ति सहित अगस्त कुण्ड के दक्षिण में था। इस प्रकार चौसठ्ठी घाट के दक्षिण अगस्त तीर्थ और उसके दक्षिण

गङ्गाकेशव तीर्थ की स्थिति काशी खण्ड में है। आज भी उस स्थान का नाम गङ्गामहल है। वहीं गङ्गाकेशव और गङ्गाकेशव तीर्थ के प्राचीन स्थान है।

विशेश्वर के दक्षिण में इनका स्थान वर्णित होने के कारण वर्तमान प्रचलित मन्दिर किसी समय स्थानान्तरित होकर प्रसिद्ध हुआ। इनके पूजन-अर्चन से मनुष्य नीरोग व सुखी रहता है।

१२. <u>यमादित्य</u>- काशी खण्ड में यमेश्वर के पश्चिम तथा वीरेश्वर के पूर्व सङ्कटाघाट के पास यमेश्वर घाट पर वसिष्ठेश्वर के समीप घाट की सीढ़ी पर मकान नं. सी.के ७/१६४, में इनकी मूर्ति है। काशी खण्ड में उद्धरित है कि अगस्त को सम्बोधित करते हुये यमराज के द्वारा इनकी स्थापना की गयी है। वहीं पर यमतीर्थ में स्नान कर यमादित्य के पूजन का विधान है। इनके पूजन से मानव यम-यातना से दूर रहता है।

विशेषः- द्वादशादित्यों के अतिरिक्त दो और आदित्य की मूर्तियाँ विद्यमान है।

१. <u>सुमन्त्वादित्य</u>- यह प्रतिमा हनुमान फाटक के समीप हनुमानजी के मन्दिर में स्थापित है। यह स्थान सुमन्तु मुनि द्वारा स्थापित किया गया है। इनके पूजन से कुष्ठ सदृश महारोग दूर हो जाते हैं।

सुमन्तमुनिना श्रेष्ठस्तत्रादित्यः प्रतिष्ठितः।
तस्य सन्दर्शनादेव कुष्ठव्याधिः प्रशाम्यति।।

(का.ख.- ६५/६)

२. कर्णादित्य- यह प्रतिमा मकान नं. के.-२०/१४७, में विद्यमान है। कर्णादित्य तीर्थ राज मन्दिर के नीचे गङ्गा तट पर विद्यमान हैं। काशी खण्ड के अनुसार कर्णादित्य तीर्थ के दक्षिण में कर्णादित्य की मूर्ति स्थापित है।

तद्दक्षिणे महापुण्यं कर्णादित्याख्यमुत्तमम्।

(का.ख.- ८४/४५)

काशी में बारह आदित्यों का उल्लेख काशी खण्ड में किया गया है। बारह संख्या वर्ष भर बारहों महीने स्मरण करती रहती है। प्रत्येक मास में किसी न किसी सूर्य की वार्षिक यात्रा की जाती रही है। इसी के अनुसार चार रविवार प्रत्येक मास में प्रमुख माने जाते हैं। सूर्य के सम्बन्ध में षष्ठी और सप्तमी विशेष तिथि फलदायक है। वैज्ञानिक दृष्टि से सूर्य का वर्चश्व रोगनाशक और स्वास्थ्यप्रद है। इसी कारण प्राचीन काल से सूर्यदेव की उपासना चली आ रही है। काशी में अनेक प्रकार की सूर्योपासना यात्राएँ- अन्तर्गृह-यात्रा, पञ्चतीर्थ-यात्रा, पञ्चकोशी-यात्रा, वार्षिक-यात्रा, मास-यात्रा एवं वार-यात्रा उपासना के रूप में की जाती है।



अध्याय- ८

सूर्यदेव का प्रचलित नाम

सूर्यदेव के नाम अनन्त-असंख्य हैं क्योंकि सूर्य और विष्णु दोनों अभिन्न तत्व हैं। जो विष्णु हैं वही सूर्य हैं वस्तुतः सूर्य एक ही हैं किन्तु कर्म, काल और परिस्थिति के अनुसार सूर्य के विभिन्न नाम रखे गये हैं।

कहा गया है- नामी एक, नाम अनेक।

ऋग्वेद में सूर्यदेव का नाम- १. मित्र, २. अर्यमा, ३. भग, ४. वरुण (बहुव्यापक), ५. दक्ष और ६. अंश है। (ऋग्वेद- ४/२७/१)

अमरकोष में सूर्यदेव के नाम- १. सूर, २. आदित्य, ३. द्वादशात्मा, ४. दिवाकर, ५. भास्कर, अहस्कर, ७. ब्रघ्न, ८. प्रभाकर, ९. विभाकर, १०. भास्वान्, ११. सप्ताश्व, १२. हरिदश्व, १३. उष्णरश्मि, १४. विकर्तन, १५. अर्क, १६. मार्तण्ड, १७. मिहिर, १८. अरुण, १९. द्युमणि, २०. तरणि, २१. चित्रभनु, २२. विरोचन, २३. विभावसु, २४. ग्रहपति, २५. त्विषां पति, २६. अहर्पति, २७. भानु, २८. हंस, २९. सहस्रांशु, ३०. तपन और ३१. रवि।

इन नामों के अतिरिक्त १६-नाम और उल्लिखित हैं-

१. पद्माक्ष, २. तेजसां राशि, ३. छायानाथ, ४. तमिस्रहा, ५. कर्मसाक्षी, ६. जगच्चक्षु, ७. लोकबन्धु, ८. त्रयीतनु, ९. प्रद्योतन, १०. दिनमणि, ११. खद्योत, १२. लोकबन्धव, १३. इन, १४. धामनिधि, १५. अंशुमाली और १६. अब्जिनीपति।

(अमरकोष- १/३/२८-३०-४१)

सूर्यनारायण, सविता, आदिदेव, विभु, तमिस्रहर, तपन, भानु, ज्योतिर्मय, विष्णु, शंख-चक्रधर, रत्नहार-केयूर-मुकुटधर, लोकच्चक्षु, लोकेश, आदित्यदेव, गौतम, भानुमान, शासित धूम्रकेत, सम्भव, मार्तण्ड, भुवन-भास्कर, विवस्वान, तीक्ष्णांशु, चित्रभानु, विश्वप्रकाशक, विभावसु, पूषन (पूषा), हिरण्येन, शुक्र, अंशु, धाता, त्वष्टा, भग।

काशी के द्वादश तीर्थ-सूर्यदेव के नाम- लोलार्क, उत्तरार्क, साम्बादित्य, द्रौपदादित्य, मयूखादित्य, खखोल्कादित्य, अरुणादित्य, वृद्धादित्य, केशवादित्य, गङ्गादित्य, यमादित्य।

सूर्यदेव का मासानुसार नाम- मधु चैत्र में धाता, माधव (वैशाख) में **मैत्रेय** (अर्यमा), शुक्र (ज्येष्ठ) में **मित्र**, शुचि (आषाढ़) में **वरूण** (अरूण), नभ (श्रावण) में **इन्द्र** (इन्द्रादित्य), नभस्य (भाद्रपद) में **विवस्वान्**, तप (अश्विन) में **पूषा**, तपस्य (कार्तिक) में **पर्जन्य/क्रतु**, सह (मार्गशीर्ष) में **अंश** (अंशुमान), पुण्य (पौष) में **मैत्रेय** (भग), इष (माघ) में **भास्कर** (त्वष्टा), ऊर्ज (फाल्गुन) में **सूर्य** (विष्णु)। इन्द्र सबसे बड़े हैं और विष्णु सबसे छोटे।

(वि.पु.- २/१०/३-१८)

सूर्यनमस्कार में बारह नाम- मित्राय, रवये, सूर्याय, भानवे, खगाय, पूष्णे, हिरण्यगर्भाय, मारीचये, आदित्याय, सवित्रे, अर्काय, भास्कराय।

सूर्यदेव के ब्रह्मस्वरूप के नाम- अश्वत्थ, शाश्वतपुरुष, सनातन, सर्वादि, अनन्त, प्रशान्तात्मा, विश्वात्मा, विश्वतोमुख, सर्वतोमुख, चराचरात्मा, सूक्ष्मात्मा। ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, शौरि, वेदकर्ता, वेदवाहन, स्रष्टा, आदिदेव और पितामह, सूर्य, अज, काल, शनैश्चर।

महाभारत में सूर्यदेव के बारह नाम- धाता, मित्र, अर्यमा, इन्द्र, वरूण, अंश, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा और विष्णु।
(विष्णुपुराण- १/१५/१३१-१२३/महाभारत- १/६६/३६)

'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च' (महाभारत- ३/३/५/८)

प्रजाध्यक्ष, विश्वकर्मा, जीवन, भूताश्रय, भूतपति, सर्वधातु-निषेचिता, भूतादि, प्राणधारक, प्रजाद्वार, देहकर्ता और चराचरात्मा, धर्मध्वज, वेदकर्ता, वेदाङ्ग, वेदवाहन, योगी, कामद, करूणान्वित।

कालाध्यक्ष सूर्य का नाम- काल, कालचक्र प्रवर्तक, कृत, त्रेता, द्वापर, कलियुग, संवत्सरकर, दिन, रात्रि, याम, क्षण, कला, काष्ठा, तमोनुद्, कालमान।

मारीचि के पुत्र कश्यप के द्वारा अदिति के बारह पुत्र सूर्य के ही अंश माने जाते हैं- धाता, मित्र, अर्यमा, इन्द्र, वरूण, अंश, भग, विवस्वान्, पूषा, सविता, त्वष्टा और विष्णु। जो बारह मास के रूप में हैं।

ग्रहपति सूर्यदेव के नाम- सूर्य, सोम, अङ्गारक (मङ्गल), बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनैश्चर, धूमकेतु।

सूर्यदेव को मोक्षद्वार कहते हैं- जो स्वर्गद्वार भी हैं।
(महाभारत- ३/३/३९-४४)

गीता के ८/२४ में स्पष्ट है कि उत्तरायण में मरनेवाला ब्रह्मलोक को प्राप्त होता है।

महाभारत में कहा गया है कि सूर्यदेव को कामद और करुणान्वित कहते हैं जो करुणा की वर्षा करते हैं, प्रजाद्वार नाम से जाना जाता है।

सूर्यदेव के परम गोपनीय एक सौ आठ (१०८) नाम जो स्वर्ग और मोक्ष देने वाले हैं- ॐ सूर्य, अर्यमा, भग, त्वष्टा, पूषा (पोषक), अर्क, सविता, रवि, गभस्तिमान् (किरणोंवाले), अज (अजन्मा), काल, मृत्यु, धाता (धारण करने वाले), प्रभाकर (प्रकाश का खजाना), पृथ्वी, आप् (जल), तेज, ख (आकाश), वायु, परायण (शरण देने वाले), सोम, बृहस्पति, शुक्र, बुध, अङ्गारक (मङ्गल), इन्द्र, विवस्वान्, दीप्तांशु (प्रज्वलित किरणों वाले), शुचि (पवित्र), सौरि (सूर्य पुत्र मनु), शनैश्चर, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, स्कन्द (कार्तिकेय), वैश्रवण (कुबेर), यम, वैद्युत (बिजली में रहने वाले), अग्नि, जाठराग्नि, ईंधन (ईंधन में रहने वाले), अग्नि, तेजःपति, धर्मध्वज, वेदकर्ता, वेदाङ्ग, वेदवाहन, कृत (सत्ययुग), त्रेता, द्वापर, कलि, सर्वामराश्रय, कला, काष्ठा, मुहूर्त, क्षपा (रात्रि), याम (प्रहर), क्षण, संवत्सर, अश्वत्थ, कालचक्र, विभावसु (अग्नि), पुरूष, शाश्वत, योगी, व्यक्ताव्यक्त, सनातन, कालाध्यक्ष, प्रजाध्यक्ष, विश्वकर्मा, तमोनुद (अन्धकार को भगाने वाले), वरुण, सागर, अंश, जीमूत (मेघ), जीवन, अरिहा (शत्रुओं का नाश करने वाले), भूताश्रय, भूतपति, सर्वलोकनमस्कृत, स्रष्टा, संवर्तक (प्रलय कालीन), अग्नि, सर्वादि, अलोलुप (निर्लोभ), अनन्त, कपिल, भानु, कामद (कामनाओं को पूर्ण करने वाले), सर्वतोमुख (सब ओर मुखवाले), जय, विशाल, वरद, सर्वभूतनिषेवित, मन, सुपर्ण (गरुड़), भूतादि, शीघ्रग (शीघ्र चलने वाले), प्राणधारण, धन्वन्तरि, धूमकेतु, आदिदेव, अदितिपुत्र, द्वादशात्मा (बारह स्वरूपों वाले), रवि, दक्ष, पिता, माता, पितामह, स्वर्गद्वार, प्रजाद्वार, मोक्षद्वार, त्रिविष्टप (स्वर्ग), देहकर्ता, प्रशान्तात्मा, विश्वात्मा, विश्वतोमुख, चराचरात्मा, सूक्ष्मात्मा, मैत्रेय तथा करुणान्वित (दयालु)।

अध्याय- ९

सूर्यदेव की वंशावली

सर्वप्रथम सृष्टि के पूर्व अव्यक्त से शाश्वत (नित्य), अव्यय हिरण्य (ब्रह्म) प्रकट हुए। ब्रह्मा से मरीचि एवं मरीचि से कश्यप की उत्पत्ति हुई। कश्यप से विवस्वान् (सूर्यदेव) प्रादुर्भूत हुए। भगवान् विवस्वान् ने कृपा करके मनु को जन्म दिया, जो इस सृष्टि के सर्वप्रथम शासक माने जाते हैं। उन्होंने अपनी शासन-व्यवस्था के स्वरूप को दृढ़ रखने के लिये एक नियम(विधि)- ग्रन्थ का निर्माण किया जो आज भी मनुस्मृति के नाम से प्रसिद्ध है। इसी मनु से इक्ष्वाकु उत्पन्न हुए। इक्ष्वाकु के पुत्र विकुक्षि, विकुक्षि के पुत्र बाण, बाण के पुत्र अनरण्य, अनरण्य के पुत्र पृथु, पृथु के पुत्र त्रिशङ्कु हुए। त्रिशङ्कु के पुत्र धुन्धुमार, धुन्धुमार के पुत्र युवनाश्व, युवनाश्व के पुत्र मान्धाता, मान्धाता के पुत्र सुसंधि, सुसंधि के दो पुत्र ध्रुवसंधि एवं प्रसेनजित् थे। ध्रुवसंधि के पुत्र भरत, भरत के पुत्र असित, असित के पुत्र सगर, सगर के पुत्र असमंजस, असमंजस के पुत्र अंशुमान, अंशुमान के पुत्र दिलीप, दिलीप के पुत्र भगीरथ, भगीरथ के पुत्र ककुत्स्थ, ककुत्स्थ के पुत्र महाप्रतापी रघु, रघु के पुत्र कल्माषपाद, कल्माषपाद के पुत्र शङ्खण, शङ्खण के पुत्र सुदर्शन, सुदर्शन से अग्निवर्ण, अग्निवर्ण से शीघ्रग, शीघ्रग के पुत्र मरु, मरु के पुत्र प्रशुश्रुक, प्रशुश्रुक के पुत्र अम्बरीष, अम्बरीष के पुत्र नहुष, नहुष के पुत्र ययाति, ययाति से नाभाग, नाभाग के पुत्र अज, अज के पुत्र दशरथ, इन्हीं महाराज दशरथ से महातेजस्वी विश्वविख्यात अवर्णनीय छविवाले राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न हुए। सबके दो-दो पुत्र राम से लव और कुश, भरत से तक्षक तथा पुष्कल, लक्ष्मण से अङ्गद एवं चित्रकेतु, शत्रुघ्न से सुबाहु और शत्रुघाता हुए।

पौराणिक सूर्यवंशावली में धार्मिक और राजनीतिक क्षेत्रों में अनेक देव प्रकट हुये हैं। धार्मिक क्षेत्र में ऋषभदेव, महाराज अग्रसेन, सिद्धार्थ/गौतमबुद्ध, सिद्धार्थ से वर्धमान, महावीरस्वामी, दशमेशपिता गुरु गोविन्दसिंह, गुरु जम्बेश्वर (विश्नोई गुरु), सिद्धपीर गोगादेव, सत्यवादी हरिश्चन्द्र आदि।

राजनैतिक इतिहास में चमकने वाले सदृश्य महाराणाप्रताप सिंह, राजरानी मीराबाई, महारानी पद्मिनी देवी इन्हीं के वंशज क्षत्रपति शिवाजी महाराज, भारत के अंतिम प्रतापी सम्राट सूर्यवंशी पृथ्वीराज चौहान, वीरवैरागी लक्ष्मणसिंह, बन्दाबहादुर, असी और मसी के सिद्धहस्त कलाकार राजाभोज आदि।

संत पुरुषों में आदिशङ्कराचार्य, संत कबीरदास, चैतन्यमहाप्रभु, श्रीबल्लभाचार्यजी, शिरडी के साईंबाबा आदि।



अध्याय- १०

मोक्षद्वार - उत्तरायन सूर्यदेव

ब्रह्माण्ड के उत्तरी गोलार्ध और दक्षिणी गोलार्ध में सूर्यदेव का निवास है। श्रुति के अनुसार दक्षिणायन सूर्य के समय प्राण विसर्जन होने से पुनः जन्म ग्रहण करना पड़ता है। गीता ८/१४ में स्पष्टतः लिखा है। उत्तरायन में मरने वाले ब्रह्मलोक को प्राप्त करते हैं। महाभारत युद्ध के समाप्त होने पर इच्छामृत्यु के कारण घायल भीष्मपितामह अट्ठावन दिन दक्षिणायन सूर्य के समय उत्तरायन सूर्य की प्रतिक्षा में बाण-शय्या (शर-शय्या) पर व्यतीत किया था। क्योंकि उत्तरायन सूर्य होने पर मनुष्य की मृत्यु के बाद उसका किसी भी योनि में पुनः जन्म नहीं होता। अतः उत्तरायन सूर्य की महत्व अधिक है। सूर्य के उत्तरायन होते ही मानव की मनःस्थिति में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन होता है। परिवर्तन का यह दौर प्रकृति मूलक है। अतः इस परिस्थिति में किसी सरोवर या नदी में स्नान अत्यन्त ही धार्मिक एवं वैज्ञानिक महत्व है। प्रत्यक्षरूप से देखने को मिलता है कि सूर्य और चन्द्रमा एक साथ निवास करते हैं, अमावस्या कहलाती है।

उत्तरायन का वैज्ञानिक पहलू यह भी है कि सूर्य की रोशनी का प्रभाव उत्तर दिशा में अधिक होता है। इसी कारण उत्तर दिशा पुण्यकाल बना है। दक्षिण दिशा में रोशनी का सीधा प्रभाव पड़ता ही नहीं है। अतः बहुत सी कमियाँ और व्याधियाँ जागृत होती हैं। सूर्य की किरणों का प्रभाव उत्तर दिशा में अधिक होने के कारण उत्तर दिशा शुभ मानी जाती है। सभी शुभकार्य उत्तर दिशा में होता है। वास्तुशास्त्र में भी उत्तर दिशा में दक्षिण की अपेक्षा अधिक खुला रखते हैं। जिससे सूर्य की किरणों का लाभ अधिक से अधिक प्राप्त हो सके। अगर हम

उत्तर दिशा की अपेक्ष दक्षिण दिशा अधिक खुला रखेंगे और उत्तर में ऊँची-ऊँची दिवाल या बड़े-बड़े वृक्ष लगाते हैं तो पहले से ही अन्धकार बना रहेगा और दक्षिण दिशा खुली होने पर भी ऊँची दिवार से घिरा या बन्द हो तो अन्धेरा ही अन्धेरा बना रहेगा। रोशनी का अभाव होने से तरह-तरह की व्याधियाँ जन्म लेती हैं। अतः उत्तरायन दिशा और उत्तरायन काल शुभ होता है।

उत्तरायन सूर्य- छः मास (माघ-फाल्गुन, चैत्र-वैशाख, ज्येष्ठ-आसाढ़) सूर्य उत्तरायन होते हैं।

दक्षिणायन सूर्य- छः मास (श्रावण-भाद्रपद, अश्विन-कार्तिक, मार्गशीर्ष-पौष) सूर्य दक्षिणायन होते हैं।

सूर्य के दक्षिणायन और उत्तरायन में उनके वृद्धि और ह्रास होने लगते हैं। उत्तरायन में दिन-रात्रि का ग्रास करती है अतः दिन बड़ा होता है। दक्षिणायन में रात्रि-दिन का ग्रास करती है अतः रात्रि बड़ी होती है। सूर्य कर्क रेखा में होने पर दक्षिणायन कहा जाता है, और सूर्य मकर रेखा में होने पर उत्तरायन कहा जाता है। सूर्य भूमध्य रेखा में होने पर दिन-रात बराबर होता है। शरद्-ऋतु और बसंत-ऋतु के मध्य में सूर्य के तुला अथवा मेष राशि के जाने पर 'विषूव' होता है। उस समय दिन-रात बराबर होता है। ज्योतिष शास्त्र की गणना के अनुसार वर्ष में दो बार यह दिन बाइस सितम्बर और इक्कीस मार्च नियत है। इस दिन रात और दिन बराबर होते हैं।

मोक्षद्वार - गयातीर्थ (दक्षिणार्क सूर्य-कुण्ड)

यह तीर्थ बिहार प्रान्त के गया शहर में (पूर्व रेलवे के गया स्टेशन) स्थित है। गयातीर्थ में विष्णुपद मन्दिर, सूर्य-कुण्ड, गायत्रीदेवी मन्दिर है। मूलतः गया श्राद्ध सूर्योपासना द्वारा पितर लोगों

के निमित्त पूजन है। पञ्चतत्व शरीर सूर्य सृष्टि का स्वरूप है। अतः श्राद्ध कर पौराणिक मान्यता अनुसार मोक्ष प्राप्त के लिए किया जाता है, जो सूर्यदेव जन्मदाता हैं वही मोक्षदाता भी हैं। अतः गयातीर्थ में श्राद्ध का विधान है।

सूर्यकुण्ड- विष्णुपद के मन्दिर से करीब १७५-मीटर उत्तर, १५-मीटर लम्बी और ६०-मीटर चौड़ी दीवार से घिरा हुआ सूर्यकुण्ड नामक एक सरोवर है। उसके चारों ओर नीचे तक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। कुण्ड का उत्तरी भाग उदीची, मध्य का कनखल और दक्षिण का दक्षिण-मानस-तीर्थ कहा जाता है। तीनों स्थानों पर वेदियों में अलग-अलग पिण्डदान होते हैं। सूर्यकुण्ड के पश्चिम एक मन्दिर में सूर्यनारायण की चतुर्भुज मूर्ति खड़ी है, जिसको दक्षिणार्क कहते हैं।

गायत्रीदेवी- विष्णुपद के मन्दिर से लगभग आधा किलोमीटर उत्तर, फल्गु नदी के किनारे गायत्रीघाट है। नीचे से ऊपर घाट में ६८-सीढ़ियाँ हैं। ग्यारह सीढ़ियाँ चढ़ने पर गायत्रीदेवी का मन्दिर है। यह मन्दिर और घाट सन्-१८०० ई. में दौलतराम माधवजी सिंधिया के पोते सेठ खुशहालचन्द्र की स्त्री ने गया नगर में बनवाया था। गायत्री मन्दिर से उत्तर लक्ष्मीनारायण का एक मन्दिर है। इसी के समीप बभनीघाट पर फलगेश्वर (फल्वेश्वर शिव मन्दिर) है। दक्षिण की ओर एक मन्दिर में सूर्यनारायण की चतुर्भुज मूर्ति है जिसे लोग 'गयादित्य' के नाम से जानते हैं।



अध्याय- ११

सूर्यदेव का अन्तर्राष्ट्रीय पूजन-अर्चन

विश्व में सर्वत्र ही अनुमानतः ईसवी संवत् से छः हजार वर्ष पूर्व से लेकर (नवीन मत से चार करोड़ वर्ष से) १४० ई. तक सूर्य-पूजा के प्रमाण मिलते हैं। विश्व का प्राचीन दर्शन- (In early philosophy throughout the world the sun worship) सौरदर्शन ही है।

सूर्यदेव को अनेक देशों में निम्न नामों से पूजा जाता है-

पर्सियन चर्चों में- मित्र (Mitra)
ग्रीको में- हेलियस (Hlios)
इजिप्ट (मिश्र) में- रा (Ra)
तातारियों का भाग्यवर्धक देवता- फ्लोरस (Flourished)
प्राचीन पेरु (दक्षिण अमरिका) के ऐश्वर्यदाता- फुलेस(Fullest)
उत्तरी अमरिकन के रेड इंडियनों में- एतना (Atna) और ऐना,
अफ्रिका में- विले (श्वेत) (White)
चीन में- उ०ची० (Wu. Chi.)
प्राचीन जापानियों में- इज्नगी (Izna-gi)
नवीन सेन्टो ईजम में- एमिनो, मिनाक, नाची (Ameno-Minak-Nachi) आदि देवता। सूर्य, मित्र, दिवाकर आदि के रूप में पूजित तथा उपासित थे।

सूर्य शक्ति से ही सारी सृष्टि हुई है और इनकी पूजा-अर्चना अनादिकाल से विश्व में प्रचलित है।

बेवीलोनिया-निवासियों ने आकाश के देवता 'एना' और पृथ्वी के देवता 'इया' में निष्ठा रखते हैं और सूर्योदय से अपना दिन आरम्भ करते हैं।

मिस्र की नीलघाटी सभ्यता में सूर्य पूजा मुख्य थी, वहाँ मन्दिरों को इस तरह बनाया जाता था कि स्थापित मूर्ति के ऊपर मध्य में सूर्य उदय होते ही उनपर किरणें पड़ सकें।

ग्रीक के 'ग्रीकदर्शन' में सूर्य पूजा का प्रमाण मिलता है और आज भी ग्रीकवासी विवाह मन्त्र में 'सूर्यमन्त्र' पढ़ते हैं।

फिनीशियन लोग भी सूर्य-चन्द्र उपासक थे। आज भी पूजा-अर्चना करते हैं।

असीरियावासी अपने ढंग से सूर्यपूजा करते थे और आज भी करते हैं।

फैल्डियन लोग भी सूर्य को महत्त्व देते थे और उन्होंने सात ग्रहों का पता लगाया था, जिनके नाम पर दिन रखा गया- Sunday (रविवार), Monday (सोमवार), Tuesday (मंगलवार), Wednesday (बुधवार), Thursday (बृहस्पतिवार/गुरुवार), Friday (शुक्रवार), Saturday (शनिवार)। वे तारों की अवस्थिति और गति से भी अवगत थे।

भारत में भी सूर्यपूजा दैनिक सूर्योपासना है, जो आज भी सर्वत्र की जाती है।

भारतीय परम्परा में सूर्यपूजन पर्व एवं व्रत मुख्यरूप से रविवार का व्रत, जीवत्पुत्रिका व्रत (जूतिया व्रत), श्री सूर्यषष्ठी (डालाछठ), मकर संक्रान्ति।



अध्याय- १२

सूर्यदेव का वैज्ञानिक सौर-तथ्य एवं पृथ्वी से अनुमानित दूरी

१. सूर्य के प्रकाशमण्डल का व्यास लगभग ८,८०,००० मील है। अर्थात पृथ्वी से ११० गुना अधिक है।

२. सूर्य पिण्ड का भार पृथ्वी के भार से लगभग ३,३३,००० गुना अधिक है। यदि समस्त सौरमण्डल के ग्रहों को सम्मिलित कर लिया जाय तो सूर्य का भार समस्त ग्रहों के भार से एक हजार गुना अधिक है।

३. सूर्य से पृथ्वी की दूरी ९करोड़ २८लाख ७०हजार कि.मी. है।

४. सूर्य के प्रतिवर्ग इंच पर लगभग १०,००,००,००,००० क्विंटल का दबाव है इसका तापक्रम ४,००,००,००० अंश है।

५. सूर्य के केन्द्र भाग का तापमान १६,००,००,००० सेंटीग्रेड है।

६. सूर्यप्रकाश किरणों का वेग प्रतिसेकंड ३,००,००० कि.मी. है।

७. सूर्य की किरणों को पृथ्वी तक पहुँचने में लगभग ८ मिनट १८ सेकंड का समय लगता है।

८. एक वर्ष में सूर्यप्रकाश लगभग ९४,६३,००,००,००,००० कि.मी. की यात्रा करता है।

९. सूर्य से आकाश गङ्गा के केन्द्र की दूरी लगभग ३०,००० प्रकाश-वर्ष है।

१०. सूर्य को आकाश गङ्गा के केन्द्र की एक परिक्रमा पूरी करने में लगने वाला समय अनुमानतः २५ करोड़ वर्ष है।

११. सूर्य की आयु लगभग ६ अरब वर्ष है।

अध्याय- १३

सूर्य शक्ति का उपयोग

(सौर-ऊर्जा)

आजकल विज्ञान सूर्यशक्ति को संकलन करके ऊर्जा के रुप में कोयला, पानी, ईंधन और बिजली का लाभ ले रहा है। आजकल बड़े-बड़े सौर-ऊर्जा संकलन यन्त्र का निर्माण हो रहा है। जो सूर्य-किरणों से प्राप्त शक्ति का संचयकर अनेको उपयोग में लाये जा रहे हैं।

अमेरिकन 'टाइम्स' पत्रिका के अनुसार अमेरिका में लगभग १,००,००० घरों में सूर्य-शक्ति चलित घरेलू उपकरणों का प्रयोग हो रहा है।

जापान में भी ३०,००,००० भवनों में सौर-ऊर्जा चलित यन्त्रों का उपयोग हो रहा है।

चीन में भी सौर-ऊर्जा के उपयोगी उपकरण तैयार करने में **'सन्-मून इण्डस्ट्रीज'** बहुत आगे है।

इसराइल में भी जितने मकान हैं उसमें लगभग ३०% तीन लाख बीस हजार (३,२०,०००) मकानों में सूर्य-शक्ति चलित यन्त्रों द्वारा सौर-ऊर्जा उपयोग कर रही है।

फ्रांस में भी सौर-ऊर्जा का प्रयोग बड़े पैमाने पर औद्योगिक क्षेत्र में हो रहा है। जिसमें एक बड़ा प्रिंटिंग प्रेस केवल सौर-ऊर्जा से चल रहा है।

भारत में भी सौर-ऊर्जा (सूर्य-शक्ति) का उपयोग हो रहा है, इसके लिए भारत सरकार ने एक सौर-ऊर्जा मंत्रालय बनाया है। जिसका नाम **'नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली'** के नाम से कार्यरत है। मंत्रालय सौर-ऊर्जा के उपयोग के लिए जनमानस को प्रोत्साहित कर रहा है। आर्थिक अनुदान, उपकरण, विकास योजनायें जिलास्तर पर विकास अधिकारी की देख-रेख में चल रहा है।

अमेरिका में ३-मई, बुधवार सन्-१९७८, को सूर्य-दिवस मनाया गया था। उस दिन तत्कालीन राष्ट्रपति जिमीकार्टर ने सूर्य की उपासना भी की थी। भारत में सूर्योपासना की परम्परा प्राचीनकाल से चली आ रही है।



अध्याय- १४

सूर्य मूर्ति का वर्णन/भारत के प्रमुख सूर्य मन्दिर एवं वेध-शालाएँ

सूर्य मूर्ति का वर्णन- सूर्य मन्दिरों में सूर्यदेव की मूर्तियाँ बैठी हुई या खड़ी दोनों तरह की देखने को मिलती हैं। सूर्य का सात मुँह वाले एक घोड़े को या सात घोड़ों के रथ को वाहन कहा गया/मिलता है।

छठी शताब्दी के विद्वान वराह मिहिर ने बृहसंहिता ग्रंथ (६०/१९) में लिखा हैं- सूर्य की मूर्ति में नाक, कमल, जाँघ, पिंडली, गाल और छाती आदि ऊँचे होने चाहिए। उनका पहनावा उत्तर प्रदेश के लोगों जैसा होना चाहिए। हाँथों में कमल, छाती पर माला, कानों में कुण्डल, कमर खुली होनी चाहिए। मुख की आकृति सफेद कमल के गर्भ जैसी सुन्दर और हँसता हुआ शान्त चेहरा, मस्तक पर रत्नजटित मुकुट होना चाहिए। इस प्रकार की मूर्ति निर्माता को सुख देती है। पूजन करने वालों को स्वास्थ्य सुख-शान्ति एवं एश्वर्य मिलता है।

सूर्य मूर्ति का वर्णन शुक्र नीतिशास्त्र में प्राचीनकाल में मिली सूर्य मूर्तियाँ पैरों में होलबूट पहने हुये हैं पैर की अँगुलिया नहीं दिखाई देती हैं केवल होलबूट की कटी लकीरों से पैरों का आभास होता है। उ.प्र. के अल्मोड़ा में सूर्य मन्दिर में इसी प्रकार की सूर्य प्रतिमा है।

सौराष्ट्र के प्रभास क्षेत्र (सोमनाथ) बहुत से भग्नावशेष सूर्य मन्दिरों से जाना जाता है। पुराणों के अनुसार वहाँ सूर्य के १२-मन्दिर थे जिनमें केवल दो मन्दिर के प्रासाद खण्डित दशा में खड़े हैं। सूर्य मन्दिर पूर्वाभिमुख होते हैं यही सूर्य मन्दिर की पहचान है।

सोमनाथ प्रभास क्षेत्र में हूणों और महमूद गजनी के बार-बार आक्रमण से सभी मन्दिरों के अवशेष व भग्नावशेष मिलते हैं।

दक्षिण भारत में मुसलमानों का आक्रमण कम हुआ अतः वहाँ मन्दिर आज भी अपनी अखण्डता और भव्यता से पूर्ण है।

भारत के प्रमुख सूर्य मन्दिर एवं सूर्य-वेधशालाएँ

भारत के पूर्व में कोणार्क, पश्चिम में मोढेरा और उत्तर में काश्मीर का मार्तण्ड सूर्य मन्दिर विश्वविख्यात है।

१. कोणार्क का सूर्य मन्दिर- ब्रह्म-पुराण में कोणार्कादित्य या उत्कल का कोणार्क कहा गया है, जो वस्तुतः पुरी से ३०-कि.मी. दूरी पर आज का कोणार्क शहर है। हाजरा (Studies in uppuranas 1 Page 106) के अनुसार वर्तमान सूर्य मन्दिर को गाङ्गनृसिंहदेव ने प्रथम शती विक्रमी में निर्माण कराया था। कोणार्क को प्राचीन और पद्मक्षेत्र कहा जाता है। श्रीकृष्ण के पुत्र साम्ब ने कोणार्कादित्य की आराधना की थी और एक सूर्य मूर्ति भी स्थापित की थी। आज कोणार्क मन्दिर में कोई आराध्य मूर्ति नहीं हैं। वह मूर्ति अब पुरी के संग्रहालय में है। किसी समय चन्द्रभागा नदी के पास सौर-सम्प्रदाय का प्रधान केन्द्र था। चारों ओर पक्के घेरे में सूर्यदेव का मन्दिर है यह रथ मन्दिर है। इस रथ मन्दिर में रथ के पहिये तथा सात घोडे. , सारथी का स्थान आदि बने हैं। मन्दिर बहुत ऊंचा था किन्तु शिखर का भाग टूट गया है। मन्दिर का कुछ हिस्सा धँस गया है सामने मण्डप का कुछ भाग खड़ा है। इसके पीछे भग्नदशा में सूर्य-पत्नी 'संज्ञा' का मन्दिर है। यहाँ नवग्रह मूर्तियाँ एक शिला में हैं जो अखण्ड और सुन्दर है। यह सूर्य मन्दिर अपनी कला के लिए विश्वप्रसिद्ध एवं सर्वश्रेष्ठ है। इस परिसर में एक सरकारी संग्रहालय भवन भी है, जिसमें मूर्तियों के अनेक अंश संगृहीत हैं।

२. काश्मीर का मार्तण्ड मन्दिर- हिमालय की पृष्ठभूति में काश्मीर स्थित अमरनाथ के मार्ग पर मार्तण्ड मन्दिर है। यह मन्दिर (७२४-७६० ई.) में ललितादित्य मुक्तपीड़ नामक राजा ने निर्माण कराया था। आज भी मन्दिर भग्नावशेष रूप में विद्यमान है।

३. गुजरात में गोधरा का सूर्य मन्दिर- अमदाबाद से १००-कि.मी. की दूरी पर स्थित है जिसे मोंढेरा का सूर्य मन्दिर भी कहते हैं। यह मन्दिर ११-वी. शताब्दी का बना है जो जीर्ण-शीर्ण स्थिति में है। आज से नौ सौ वर्ष पहले निर्माण हुआ था। यह मोढेरा का सूर्य-मन्दिर मोढ बनिये और मोढ वैष्णव के इष्टदेव का स्थान है। यह साधारण प्रकार का भ्रमयुक्त विशाल मन्दिर है। गर्भगृह के चारों ओर अन्दर प्रदक्षिणा मार्ग है। उसके आगे गुढ़ मण्डप है तथा उसके आगे खुला नृत्य-मण्डप है। प्रतोली के दो स्तम्भ बिना खम्भे व तोरण के हैं। तोरण नीचे गिरा हुआ है तथा आगे सूर्य-कुण्ड है। उसमें अनेक देवी देवताओं की मूर्तियाँ आलों में रखी हैं। जिसे मोंढेरा का सूर्य मन्दिर कहते हैं।

कोणार्क का सूर्य मन्दिर, काश्मीर का मार्तण्ड मन्दिर तथा गुजरात का गोधरा स्थित सूर्य मन्दिर एक ही तरह के हैं। इनकी आकृति इस प्रकार बनायी गयी है कि प्रत्येक वर्ष २१-मार्च और २२-सितम्बर को जब दिन-रात बराबर होते हैं तो उगते हुए सूर्य की किरणें सीधे प्रतीमा पर पड़ती हैं।

उत्तर प्रदेश में अल्मोड़ा का सूर्य मन्दिर अपनी अलग विशेषता रखता है जिसमें स्थापित सूर्य मूर्ति रथ पर नहीं है और मूर्ति पादाछत्र पैरों को देखने से लगता है कि बूट/जूता पहने हुए है।

देवलास का विशाल सूर्य मन्दिर, अल्मोड़ा की पहाड़ी पर कटारमल का मन्दिर के नाम से जाना जाता है यहाँ पर सूर्यदेव की मूर्ति कमल के ऊपर आसीन है।

गया में विशाल दक्षिणार्क सूर्य मन्दिर सिद्धपुर मंढेरा तीर्थ है। अयोध्या का सहनियाँ (तीमकगढ़), जयपुर का गल्लताजी, जोधपुर का आसीया सूर्यदेव मन्दिर, राजस्थान में रणकपुर का सूर्य मन्दिर, खजुराहो मध्यप्रदेश का सूर्य मन्दिर, गुजरात का खम्भात की खाड़ी के पास नगामा शहर का सूर्य मन्दिर तथा दक्षिण भारत में कुम्भकोणम में भी सूर्य मन्दिर है।

सन्–४७३ ई. में मालवा दशपुर/दशोर में रेशम बुनने वाले संघ ने एक सूर्य मन्दिर बनवाया था। जिसका उल्लेख एक शिलालेख में उद्धत है।

एलोरा और खण्डगिरी की गुफाओं में भव्य सूर्य मूर्ति गढ़ी गयी हैं। जो सूर्यदेव, त्रिदेव की मूर्ति है। गुजरात बीजापुर के पास कोट्यर्क का प्राचीन सूर्य मन्दिर साबरमती और हाथपति नदी के संगम पर है। वहाँ अभी भी सन्–१५० ई. के क्षत्रीय राजा रूद्रदाम के सिक्के मिलते हैं। यहाँ कोटि या करोड़ सूर्य मन्दिर हैं। यहाँ सूर्य कुण्ड भी है, यहाँ के इष्टदेव कोट्यर्क या कोष्टारक सूर्यदेव ही हैं।

मलतंगा (बेलगांव, कर्नाटक) का सूर्यनारायण मन्दिर– यहाँ ४००–वर्ष पुरानी २–फुट ऊंची सूर्यनारायण की भव्य मूर्ति है। जहाँ प्रतिदिन सूर्य–सूक्त का पाठ नियमित होता है। हनुमज्जयन्ती के दिन सूर्योदय के समय हनुमानजी की पालकी सूर्यनारायण मन्दिर के सामने आती है। सूर्य–मन्दिर के दाहिने बाजू में 'जय' और बायें बाजू में 'विजय' की प्रतिमाएँ हैं। मूर्ति के नीचे पीठ पर मध्य में सूर्यदेव का मुख है। दोनों बाजूओं को मिलाकर सात अश्वों का मुख है।

भारत के अतिरिक्त जापान में भी उगते हुए सूर्य का मन्दिर है।

नेपाल में भी सूर्य मन्दिर पशुपतिनाथ क्षेत्र में गुहेश्वरी मन्दिर के समीप बागमती नदी के किनारे पूर्वी तट पर सूर्यघाट नामक स्थान पर स्थित है। सूर्यविनायक नामक एक और मन्दिर भक्तपुर के निकट अवस्थित है। यह मूर्ति चतुर्भुज है और सिर किरणावलियों से आवृत हैं तथा हाँथ में शंख, चक्र, गदा के साथ अभयमुद्रा में है।

सूर्य वेधशालाएँ एवं तारामण्डल

भारत में छठी सदी से अंक गणित द्वारा सूर्य की गति, १२-महिने का वर्ष, प्रति तीसरे साल एक माह जोड़ने की विधि शोध की गई थी तथा ग्रहण आदि का निरुपण किया गया था। सूर्य से हमें ऊष्मा और प्रकाश दोनों प्राप्त होता है यही ऊष्मा ऊर्जा का स्रोत है। वैज्ञानिकों के अनुसार सूर्य की रचना ठोस नहीं है 'गैसीय' है। यह अनेक प्रकार की गैसों से निर्मित है, जो इसकी अनन्त ऊष्मा और ऊर्जा का मूल भण्डार है।

भारत वर्ष में सूर्यविज्ञान के शोध के लिए अनेको सूर्य-वेधशालाएँ हैं जो उज्जैन, जयपुर, दिल्ली, वाराणसी में स्थित हैं। आज भी सौर-जगत् विज्ञान पर अनुसंधान हो रहा है। सौर-पंचाङ्ग शोधकार्य का निचोड़ है। आकाशीय सूर्यादि ग्रहों, उपग्रहों, नक्षत्र-तारों (ज्योतिष्क-पिण्डों) की गति- अवगति की गणना के लिए १८-वीं सदी के पूर्वार्ध में महाराज सवाई मानसिंह ने जयपुर, उज्जैन, बिकानेर, दिल्ली का जन्तर-मन्तर, वाराणसी की वेधशाला मानमन्दिर घाट पर बनवाया था। इनमें सात यन्त्रों की सहायता से समस्त ग्रह-मण्डल और नक्षत्र समूहों का परिज्ञान किया जाता था। काशी, कोडईकनाल, हैदराबाद एवं नैनीताल में उत्कृष्ट वेधशालाएँ हैं।

१९-वीं सदी के उत्तरार्द्ध में बिड़ला परिवार द्वारा कोलकाता में बिड़ला प्लेनेटोरियम (तारामण्डल), मुम्बई में तारापुरवाला प्लेनेटोरियम (तारामण्डल), चेन्नई तथा इलाहाबाद का प्लेनेटोरियम आधुनिक तारामण्डल प्रेक्षागृह है। जहाँ तारामण्डल, ग्रहों आदि का दृश्य तथा गतिविधियों को दर्शाया जाता है।



अध्याय- १५

मानव शरीर के शरीरस्थ शक्ति केन्द्र 'सूर्य-चक्र'

भगवान सूर्यनारायण ही संसार के समस्त ओज, दीप्ति और कान्ति के निर्माता हैं। वे आत्मशक्ति के प्रणेता एवं आश्रयदाता तथा प्रकाशतत्त्व के विधाता हैं।

भगवान सूर्य परमात्मा नारायण के साक्षात् प्रतीक हैं, इसीलिए 'सूर्यनारायण' कहलाते हैं। सर्ग के आदि में भगवान नारायण ही सूर्य रूप में प्रगट हुए तभी से सूर्य की गणना पंचदेवों में होती है। सूर्य में उत्पादिका, संरक्षिका, आकर्षिका और प्रकाशिका- सभी शक्तियाँ विद्यमान हैं। भगवान सूर्य अपनी शक्ति अपने कुटुम्ब के प्रत्येक सदस्य- चन्द्र, मंङ्गल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि आदि को यथायोग्य परिमाण में नित्य प्रदान करते हैं। भगवान् सूर्यनारायण ने 'मय' नामक असुर की आराधना से प्रसन्न होकर उसको ज्ञान दिया जिससे सूर्यदेव ज्ञानदेव भी कहलाते हैं। ज्ञानयोग और भक्तियोग के साथ-साथ सूर्यनारायण निष्काम कर्मयोग के भी आचार्य माने जाते हैं।

भगवद्गीता (४/१) में योग शिक्षा सर्व प्रथम भगवान श्रीकृष्ण ने सूर्यनारायण को ही दी थी।

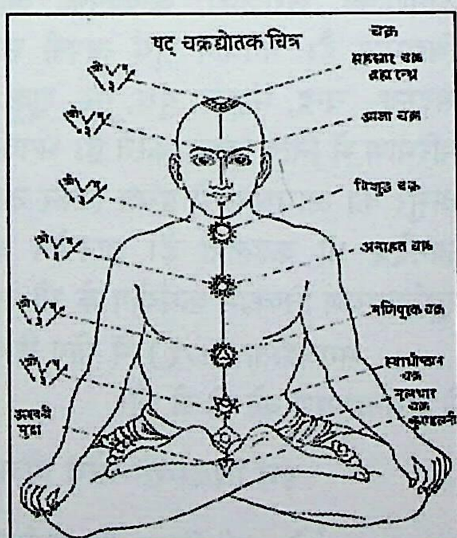
इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।

कर्मयोग की शिक्षा को सूर्यनारायण ने आत्मसात् कर लिया था और तभी से वे नित्य, निरन्तर, नियमितरूप से गतिशील रहकर सम्पूर्ण संसार को कर्म करने का पथ-प्रदर्शन करते चले आ रहे हैं। इसीलिए सूर्यनारायण को ज्ञानदेव भी कहते हैं।

यौगिक क्रियाओं के स्फुरण एवं जागरण में भी भगवान सूर्यनारायण की आराधना महत्त्वपूर्ण है। महाकुण्डलिनी शक्ति समस्त विश्व के प्राणियों में व्याप्त है। मनुष्यों में कुण्डलिनी के रूप में विद्यमान है जो षट्चक्र के रूप में है। सूर्यदेव की नियमित आराधना व साधना से योगी षट्चक्र भेदकर कुण्डलिनी शक्ति को उद्बुद्ध (जागृत) कर सकने में सक्षम हो जाता है।

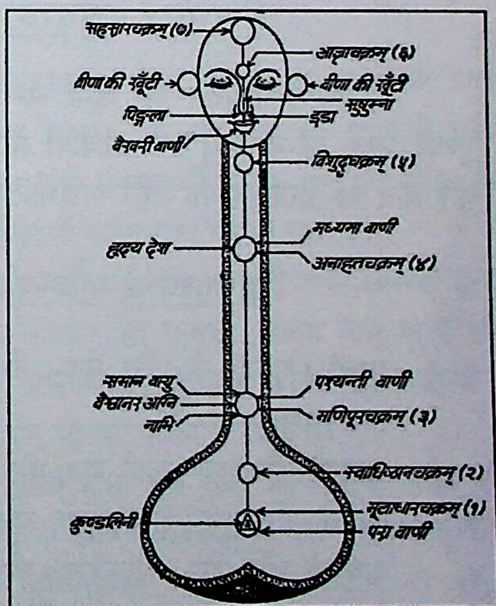
शरीर में छः चक्र होते हैं जो ब्रह्माण्ड कहलाता है, जिसे सूर्यचक्र भी कहते हैं वह शरीर में ही स्थित हैं।

१. मूलाधारचक्र, २. स्वाधिष्ठानचक्र, ३. मणिपूरकचक्र, ४. अनाहतचक्र, ५. विशुद्धचक्र, ६. आज्ञाचक्र तथा ७. सहस्त्रार चक्र।



१.मूलाधारचक्र- गुद्प्रदेश के ऊपर में, २. स्वाधिष्ठानचक्र-लिङ्ग में, ३. मणिपूरकचक्र- नाभि में, ४. अनाहतचक्र- हृदय में, ५. विशुद्धचक्र- कण्ठ में, ६. आज्ञाचक्र- दोनों ऑखों के भौहों के मध्य में तथा सहस्त्रारचक्र- ब्रह्मरन्ध्र में (सिर के ऊपर)। इन चक्रों में क्रमशः गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, शिव, जीवात्मा, गुरू तथा व्यापक परब्रह्म हैं जो निवास करते हैं। यानि- मूलाधारचक्र में गणेशजी, स्वाधिष्ठानचक्र में ब्रह्माजी, मणिपूरकचक्र में विष्णुजी, अनाहतचक्र में शिवजी, विशुद्धचक्र में जीवात्मा, आज्ञाचक्र में गुरू, सहस्त्रार में सर्वव्यापी परब्रह्म।

मानव-शरीर में आध्यात्मिक शक्ति के जागरण एवं संचालन के आठ केन्द्र हैं, जिन्हें यौगिक भाषा में 'चक्र' कहा जाता है। योग-साधना में आठों चक्रों के ध्यान तथा जागरण का अलग-अलग महत्त्व है:- १. मूलाधार, २. स्वाधिष्ठान, ३. मणिपूरक (सूर्यचक्र), ४. अनाहतचक्र, ५. विशुद्धिचक्र, ६. आज्ञाचक्र, ७. बिन्दुचक्र, ८. सहस्रारचक्र। इनमें से मणिपूरकचक्र (सूर्यचक्र), अनाहतचक्र, आज्ञाचक्र तथा सहस्रारचक्र। इन चारों चक्रों का ध्यान साधना में आध्यात्मिक शक्ति के जागरण के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण है। मणिपूरकचक्र (सूर्यचक्र) हमारी शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक शक्ति के जागरण का प्रमुख केन्द्र है। मानवीय शरीर रचना में श्वसन क्रिया प्रणाली अत्यन्त वैज्ञानिक ढ़ंग से प्रकृति द्वारा संचालित होती है। सर्वप्रथम मानवीय प्राण नाभि-केन्द्र (सूर्यचक्र) से स्पन्दित हो हृदय (हृदेश) में जाकर टकराता है। हृदय और फेफड़ों का रक्त-शोधन करके सारे शरीर में संचार करने में सहायता करता है। जिससे मनुष्य चैतन्य और शक्ति सम्पन्न हो जाता है। जो वाद्ययंत्र वीणा के रूप में शरीरस्थ होता है।



दिन-रात चौबीस घण्टों में मनुष्य के २१,६०० श्वासों की सुक्ष्म गति होती है, जो हं का उच्चारण करते हुये श्वास बाहर निकलती है। और सः ध्वनि करते हुये अन्दर प्रविष्ट होती है। 'हंसः, हंसः' मंत्र निरन्तर जाप होता रहता है जो श्वास-प्रश्वास की क्रिया है। सःहं, सःहं करते हैं, सः से श्वास लेना तथा हं से श्वास बाहर निकालना है। (जो आम बोल-चाल में सोहम्, सोहम् कहते हैं सः हं है। आप स्वयं श्वास-प्रश्वास लेकर ध्यान देकर अनुभव कर सकते हैं।)

पंचभूत (पंचतत्त्व शरीर)

सृष्टिकर्त्ता सूर्यदेव की कृपा से- मनुष्य का पंचभूत शरीर पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश से बना है, ये पाँच स्थूल भूत कहे जाते हैं। इसलिए यह शरीर पाञ्चभौतिक कहलाता है।

पंचतत्त्व के पाँच-पाँच गुण

१. पृथ्वी (भूमि) के पाँच गुण- त्वचा, हड्डियाँ, नाड़ियाँ, रोम तथा मांस।
२. जल के पाँच गुण- लार, मूत्र, वीर्य, मज्जा और रक्त।
३. तेज के पाँच गुण- क्षुधा, तृषा, आलस्य, निद्रा और कान्ति।
४. वायु के पाँच गुण- सिकुड़ना, दौड़ना, लाँघना, फैलाना तथा चेष्टा करना।
५. आकाश के पाँच गुण- घोष (शब्द/आवाज), छिद्र, गाम्भीर्य, श्रवण और सर्वसंश्रय (समस्त तत्त्वों को आश्रय प्रदान करना)। (गरुणपुराण- १५/२५-३०)

शरीर की पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और उनके देवता- श्रोत्र (कान), त्वक् (त्वचा), जिह्वा, चक्षु (नेत्र) और नासिका। इनके देवता क्रमशः दिशा, वायु, सूर्य, प्रचेता और अश्विनी कुमार हैं।

शरीर की पाँच कर्मेन्द्रियाँ और उनके देवता- मुख, हाथ, पैर, गुदा और उपस्थ। इनके देवता क्रमशः वहिन, इन्द्र, विष्णु, मित्र तथा प्रजापति हैं।

शरीर की दस प्रधान नाड़ियाँ- शरीर के मध्य में इडा, पिङ्गला, सुषुम्णा, गान्धारी, गजजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुषा, कुहू और शंखिनी नाड़ियाँ स्थित हैं।

शरीर में दस मुख्य वायु- प्राण, अपान, समान, उदान तथा व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनन्जय हैं। हृदय में प्राण वायु, गुदा में अपान वायु, नाभि-मण्डल में समान वायु, कण्ठदेश में उदान वायु और सम्पूर्ण शरीर में व्यान वायु व्याप्त रहते हैं।

उद्गार (डकार या वमन) में नाग वायु है तथा जिसके द्वारा उन्मीलन होता है। वह कूर्म वायु है। कृकल नामक वायु क्षुधा को उद्दीप्त करता है। देवदत्त नामक वायु जम्भाई कराता है। सर्वव्यापी धनन्जय वायु मृत्यु के पश्चात् भी मृत शरीर में रहती है।

ग्रास के रूप में खाया हुआ अन्न सभी प्राणियों के शरीर को पुष्ट करता है। उस पुष्टिकारक अन्न से सारांशभूत रस को व्यान वायु शरीर की सभी नाड़ियों में पहुँचाता है।



अध्याय- १६

सूर्य-नमस्कार (यौगिक) व्यायाम

योगशास्त्र में महर्षि पतंजलि कहते हैं कि **'भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्'** सूर्य के संयम करने से संसार का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। धर्मशास्त्र में भी कहा गया है-चित्त को संयम करने से मिलने वाली सिद्धियों के निरूपण के अवसर पर तथा 'सामान्य समय में भी यदि कोई अशुचित्व प्राप्त हो तो सूर्य को देखो, तुम पवित्र हो जाओगे।'

(स्मृति रत्नाकर)

'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्'। (म.पु.- ६७/७१)

बिमारियों से पीड़ित हो तो सूर्य की उपासना करो-

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस में कहा है-

'नयन दिवाकर कचधनमाला'। (६/१५/३)

आँखों के समस्त रोग सूर्य की उपासना से ठीक हो जाते हैं।

सूर्यदेव हमारे अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों के कारक हैं। वे हमारी उपासना के मूल बिन्दु हैं। इसी प्रकार मन्त्रशास्त्रों में उनके अनेक मन्त्र प्रतिपादित हैं, जिनके अनुष्ठान से आध्यात्मिक, अधिदैविक और अधिभौतिक- सभी प्रकार की पीड़ाओं से मुक्ति पाकर हम सुखी और कृतार्थ बन सकते हैं। इसलिए सूर्य-नमस्कार, यौगिक व्यायाम करने से पहले मन्त्र का जाप मन में किया जाता है।

सूर्य-नमस्कार अपने आप में सूर्यदेव की आराधना है, स्वास्थ्यकर यौगिक व्यायाम भी सूर्यदेव की आराधना है। साधना से सिद्धि मिलती है और व्यायाम से शारीरिक स्वास्थ्य-सौन्दर्य की सम्पुष्टि होती है। यह एक विशिष्ट पद्धति है। जिसे मनुष्य सिद्ध करके शारीरिक-सौन्दर्य सम्पत्ति प्राप्त कर सकता है। इसलिए हमलोग आदिदेव सूर्य का ध्यान व प्रणाम करते हैं।

सूर्यदेव का ध्यान

रक्ताम्बुजासनमशेषगुणैकसिन्धुं भानुं समस्तजगतामधिपं भजामि।
पद्मद्वयाभयवरान् दधतं कराब्जैर्माणिक्यमौलिमरुणाङ्गरुचिं त्रिनेत्रम्।।

।। ॐ श्रीसूर्याय नमः ।।



लाल कमल के आसन पर समासीन, सम्पूर्ण गुणों के रत्नाकर, अपने दोनों हाथों में कमल और अभयमुद्रा धारण किये हुए, पद्मराग तथा मुक्ताफल के समान सुशोभित शरीर वाले, अखिल जगत् के स्वामी, तीन नेत्रों से युक्त भगवान् सूर्यदेव आपको प्रणाम करता हूँ।

सूर्य-नमस्कार (यौगिक व्यायाम) करने की धार्मिक विधि

प्रातःकाल शौच-स्नानादि दैनिक कृत से निवृत होकर पवित्रता के साथ पूर्वाधिमुख (सूर्याभिमुख) खड़े होकर हाथ जोड़कर तीन बार गायत्री मन्त्र का जाप करना चाहिए-

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि
धियो योनः प्रचोदयात्।

इसके पश्चात् व्यायाम मुद्राओं में सूर्य-नमस्कार करना चाहिए।

१. नमस्कार आसन- सीधे खड़े होकर हाथ जोड़कर सूर्य की ओर मुँह करके 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' कहना चाहिए।

२. ऊर्ध्व-नमस्कारासन- दोनों हाथों को ऊपर उठाकर तथा एड़ी उठाकर फिर 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' कहना चाहिए।

३. हस्तपादासन- दोनों हाथों को नीचे लाकर पादों को भूमि में सटाकर दोनों हाथों की अँगुलियों से धरती को स्पर्श करके सीधे झुक जाना चाहिए और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए।

४. एकपाद प्रसरणासन- बायाँ पैर भूमि पर रखकर दायें पैर को जितना हो सके पीछे ले जाना चाहिए और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए।

५. **<u>द्विपाद प्रसरणासन</u>**- दोनों हाथों को धरती से सटाकर, दोनों पैरों को जितना हो सके पीछे की ओर ले जाना चाहिए और फिर मन्त्र 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' पढ़ना चाहिए।

६. **<u>भूधरासन</u>**- हाथों और पैरों को कुछ दूरी पर जमीन पर रखकर पेट को अन्दर सटाने की कोशिश करते हैं और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' मन्त्र पढ़ते हैं।

७. **<u>अष्टांग प्रणिपातासन</u>**- भूमि पर पेट को छोड़कर मुँह के बल लेट जाते हैं जिससे दोनों हाँथ, पाँव, घुटने, छाती, मस्तक भूमि से स्पर्श करते रहें और मन्त्र का जाप करते हैं- 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्'।

८. **<u>सर्पासन</u>**- हाथों और पैरों को जमीन पर रखकर छाती और मस्तक को सूर्य के समान ऊपर उठाना चाहिए और मन्त्र 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' पढ़ना चाहिए।

९. **<u>भूधरासन</u>**- हाथों और पैरों को कुछ दूरी पर जमीन पर रखकर पेट को अन्दर सटाने की कोशिश करते हैं और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' मन्त्र पढ़ते हैं। (स्थिति ६ के अनुसार)

१०. **<u>द्विपाद प्रसरणासन</u>**- दोनों हाथों को धरती से सटाकर, दोनों पैरों को जितना हो सके पीछे की ओर ले जाना चाहिए और फिर मन्त्र 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' पढ़ना चाहिए। (स्थिति ५ के अनुसार)

११. **<u>एकपाद प्रसरणासन</u>**- बायाँ पैर भूमि पर रखकर दायें पैर को जितना हो सके पीछे ले जाना चाहिए और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए। (स्थिति ४ के अनुसार)

१२. <u>हस्तपादासन</u>- दोनों हाथों को नीचे लाकर पादों को भूमि में सटाकर दोनों हाथों की अँगुलियों से धरती को स्पर्श करके सीधे झुक जाना चाहिए और 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए। (स्थिति ३ के अनुसार)

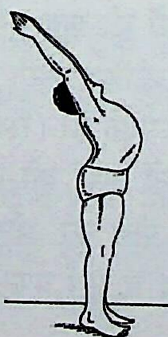
१३. <u>उपवेशासन</u>- साधारण तरह उकड़ूँ बैठकर मन्त्र 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए। दोनों हाँथ भूमि पर तथा अगुँलियों को धरती से स्पर्श करना चाहिए।

१४. <u>नमस्कारासन</u>- सीधे खड़े होकर हाँथ जोड़कर सूर्य की ओर पूर्वाभिमुख होकर 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' का पाठ करना चाहिए। (स्थिति १ के अनुसार)

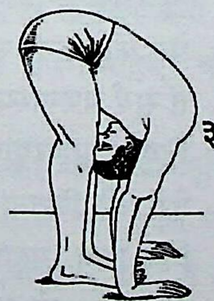
१५. <u>ऊर्ध्व-नमस्कारासन</u>- दोनों हाथों को ऊपर उठाकर तथा एड़ी उठाकर फिर 'महापापहरं देवं तं सूर्यं प्रणमाम्यहम्' कहना चाहिए। (स्थिति २ के अनुसार)



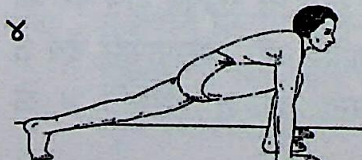
नमस्कार आसन



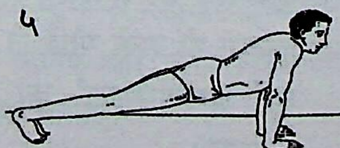
उर्ध्व नमस्कार-आसन



हस्त-पादासन

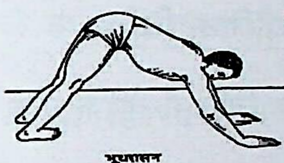


एकपादप्रसरणासन



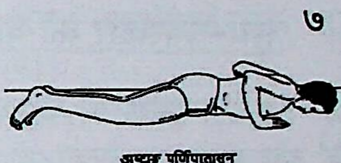
द्विपादप्रसरणासन

६



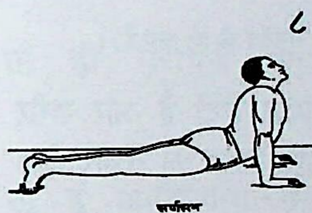
भूधरासन

७



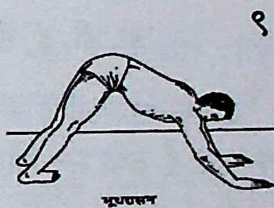
अष्टाङ्ग प्रणिपातासन

८



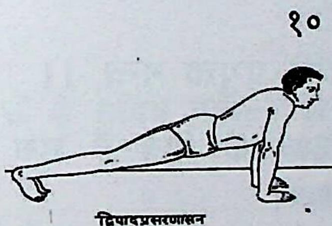
सर्पासन

९



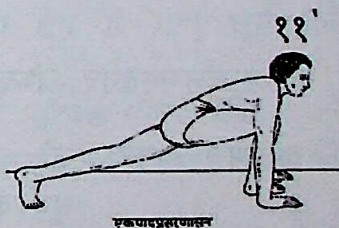
भूधरासन

१०

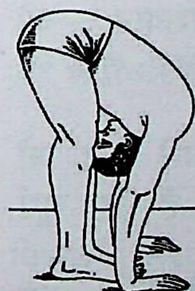


द्विपादप्रसरणासन

११



एकपादप्रसरणासन



हस्त-पादासन

१२



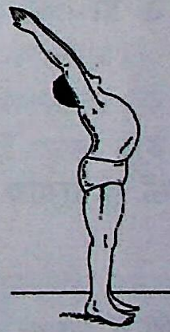
उपवेशासन

१३



नमस्कार आसन

१४



ऊर्ध्व नमस्कार-आसन

१५

आरोग्य लाभ और दीर्घ जीवन के लिए सूर्य-नमस्कार यौगिक आसन / व्यायाम अपना विशेष महत्व रखता है।

सूर्य-नमस्कार की वैदिक एवं यौगिक विधि

सूर्य-नमस्कार की वैदिक एवं यौगिक विधि में वैदिक मन्त्र 'ॐ' और षडङ्गन्यास मन्त्र-

'ह्रां, ह्रीं, ह्रूं, ह्रैं, ह्रौं, ह्रः' (जो सूर्यदेव के छः अंग हैं)।

इनके जाप करने से सूर्य-शक्ति प्राप्त होती है और शरीर स्वस्थ रहता है तथा मन और शरीर में अद्भुत शक्ति का संचार होता है।

।। सूर्यनमस्कार अभ्यास क्रम में प्रयुक्त मन्त्र ।।

ऊँ ह्रां मित्राय नमः— जो सम्पूर्ण विश्व के मित्र हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रीं रवये नमः— र व (गति एवं शब्द) करने वाले प्रशंसनीय और प्रकाशवान, जो परिवर्तनों का कर्त्ता हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रूं सूर्याय नमः— संसार को जीवन देनेवाले तेज जो प्रकाश में विचरण करते हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रैं भानवे नमः— प्रदीप्त होनेवाले प्रकाशपुंज, जो प्रकाश का दाता हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रौं खगाय नमः—आकाश में गति करनेवाले, जो गति के संचालक हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रः पूष्णे नमः— संसार के पोषण करनेवाले उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रां हिरण्यगर्भाय नमः— स्वर्णिम विश्वात्मा जिसमें सब कुछ समाविष्ट है उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रीं मरीचये नमः— रश्मियों के अधिपति जिसमें सप्तकिरणें विद्यमान हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रूं आदित्याय नमः— जीवन–रक्षक अदिति–पुत्र जो देवों के भी देव हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रैं सवित्रे नमः— विश्व को उत्पन्न करनेवाले जो सबका उत्पादक हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रौं अर्काय नमः—शक्तिमान् को उत्पन्न करनेवाले जो पूजनीय हैं उस सूर्य को नमस्कार।

ऊँ ह्रः भास्कराय नमः—प्रकाश करनेवाले आत्मज्ञान के प्रेरक जो कांतिजनक हैं उस सूर्य को नमस्कार।

विशेष— संस्कृत व हिन्दी के स्वरबोध (अनुस्वार) बारह हैं— अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः। उन्हीं में यह मन्त्र निहित है।

बीज मन्त्र— ह्रां, ह्रीं, ह्रूं , ह्रैं, ह्रौं, ह्रः ।

।। सूर्यनमस्कार मन्त्र एवं व्यायाम ।।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।
(ई.उ.–15)

सामान्यजन की दृष्टि में सत्य (ब्रह्मा) का स्वरूप अज्ञानतावश संसाररूपी ढक्कन से छिपा हुआ है। यद्यपि यह अज्ञानता मिथ्या है, वह ऐसी चमकीली है जैसे सोने की बनी हुई है और मनुष्य को लुभा देती है। किन्तु मैं सत्य (ब्रह्मा) की अनुभूति करना चाहता हूँ। मैंने सुना है कि यह सत्य सूर्य में रहता है। अतः हे सबका पोषण करनेवाले सूर्य मुझ पर कृपा कीजिए और अपने सत्य स्वरूप को प्रकट कीजिए।

भावार्थ– हे विश्व के पोषण करने वाले एकाकी (लगातार) गमन करने वाले, संसार के नियामक प्रजापति पुत्र सूर्यदेव आप अपनी किरणों को हटा लें और अपने तेज को समेट लें जिससे मैं आपके अत्यन्त कल्याणमय स्वरुप को देख सकूँ।

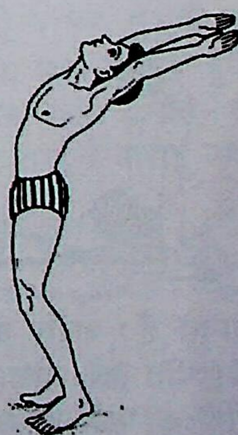
सूर्य–नमस्कार करने की विधि– प्रातःकाल शौच, दंत–धावन तथा स्नानादि से निवृत होकर किसी खुले हवादार स्थान पर सूर्य की ओर मुँह करके खड़े होकर करना चाहिए। शरीर पर कपड़े नरम तथा ढीले व हल्के होने चाहिए। शीत ऋतु में फर्श पर कम्बल तथा ग्रीष्म ऋतु में हल्की दरी या चटाई बिछा लेना चाहिए।

1. प्रथम स्थिति (नमस्कार –आसन)– मन में ऊँ ह्रां मित्राय नमः (ध्यान– अनाहत चक्र) का जाप करते हुये कम्बल अथवा चटाई/दरी के ऊपर सूर्य की ओर मुँख करके सीधे खड़े होते हैं दोनों पैरों की एड़ियाँ (आपस में) परस्पर सटी रहती है, पंजे आगे से खुला रखते हैं। इस स्थिति में प्रार्थना करने के लिए दोनों हाँथ जोड़कर भगवान भुवन भास्कर को प्रणाम करते हैं।

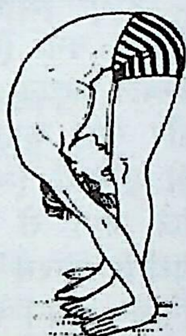


लाभ– पीठ सशक्त बनती है, चेहरा तेजस्वी बनता है, आत्मविश्वास बढ़ता है। पैरों में नया जोश आता है, दृष्टि केन्द्रित होने से मन का निरोध होता है। शरीर व मन स्वस्थ बनता हैं।

2. द्वितीय स्थिति (उर्ध्व नमस्कार–आसन)– मन में ऊँ ह्रीं रवये नमः (ध्यान– विशुद्धि चक्र) का जाप करते हैं तथा गहरी साँस भरते हुये दोनों हाँथों को दोनों कन्धों के ऊपर उठाते हुये अधिक ऊँचाई तक ऊपर ले जाते हैं, इस स्थिति में दोनों हथेलियाँ खुली रहती है, ऊँगलियाँ परस्पर मिली रहती हैं, शरीर में पूर्ण तनाव के साथ यथा सम्भव पीछे की तरफ झुकने का प्रयास करते हैं।

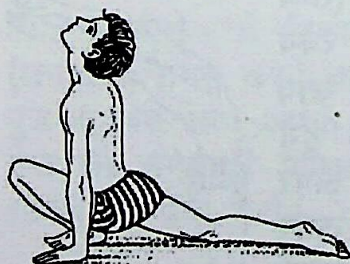


लाभ– दोनों कन्धों और भुजाओं को बल मिलता है, अन्न प्रणाली सुचारू रूप से कार्य करती है, आँख की कार्यक्षमता बढ़ती है।



3. तृतीय स्थिति (हस्त–पादासन)– मन में ऊँ ह्रूँ सूर्याय नमः (ध्यान– स्वाधिष्ठान चक्र) का जाप करते हुये, अब दोनों हाँथों को सामने की ओर धीरे–धीरे साँसों को छोड़ते हुये, नीचे ले जाते हुये (झुकते हुये) हाँथों की ऊँगलियों से पैर की ऊँगलियों को छूने का प्रयास करते हैं। ऐसा करते समय घुटने मुड़ने नहीं चाहिए।

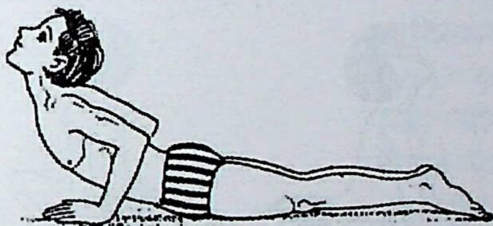
लाभ– हाँथ पैर का पूर्ण व्यायाम होता है तथा सीना, जाँघ, हाँथ–पैर बलिष्ठ बनता है, शरीर सुन्दर, स्वस्थ व कान्तिमय बनता है।



4. चतुर्थ स्थिति (एकपाद–प्रसरणासन)– मन में ऊँ ह्रैं भानवे नमः (ध्यान– आज्ञा चक्र) का जाप करते हैं, चित्रानुसार साँस भरते हुये बायें पैर को आगे ले जाते हैं तथा दायाँ पैर पीछे की ओर तानते हैं। शरीर का पूरा वजन हाँथों के पंजों पर रखते हैं। पीठ को थोड़ा नीचे दबाकर दायें पैर के घुटने तथा हाँथ के पंजे से पृथ्वी को स्पर्श करते हैं।

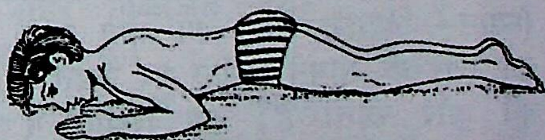
लाभ– पेट के रोग दूर होते हैं तथा पाचन तंत्र ठीक से काम करते हैं।

5. पंचम स्थिति (द्विपाद–प्रसरणासन)– मन में ऊँ ह्रैं खगाय नमः (ध्यान– मणिपूरक चक्र) का जाप करते हैं, चित्रानुसार चौथी स्थिति के अनुसार हाँथ जहाँ था वहीं रखते हैं और दूसरे पैर को भी पीछे ले जाकर सीधे फैलाते हैं। गर्दन व सीना उठाये रखते हैं, शरीर का वजन हाँथों के पंजो पर रहता है।



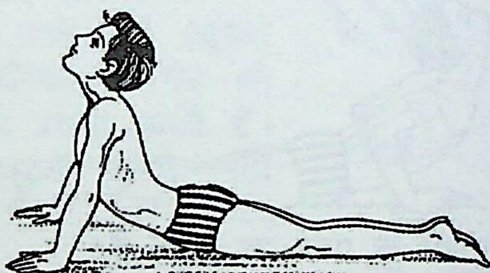
लाभ– पूरे शरीर को शक्ति मिलती है। हाँथ–पैर, कमर, रीढ़, गर्दन पंजे का पूर्ण व्यायाम होता है, शरीर फुर्तिला बना रहता है।

6. षष्ठ स्थिति (अष्टांग पर्णिपातासन)– मन में ऊँ ह्रः पूष्णे नमः (ध्यान– अनाहत चक्र) का जाप करते हुये, कुहनियों को मोड़ते हैं तथा शरीर को जमीन के समानान्तर ले जाते हैं, इस स्थिति में सम्पूर्ण शरीर तथा दोनों हाँथों के दोनों पंजों को जमीन से स्पर्श करते हैं और कुहनियाँ ऊपर उठाये रखते हैं। हाँथ के पंजों से लेकर कुहनियों तक का भाग तना रखते हैं। इस स्थिति में साँस को धीरे–धीरे पूरी तरह छोड़ देते हैं। कुछ आचार्यों के मतानुसार इस स्थिति में साँस को लेकर–रोककर कुम्भक किया जाता है तथा सीधे न लेटकर कमर को कुछ ऊपर उठायें रखा जाता है।



लाभ– हाँथ बलिष्ठ होता है तथा शरीर स्वस्थ रहता है।

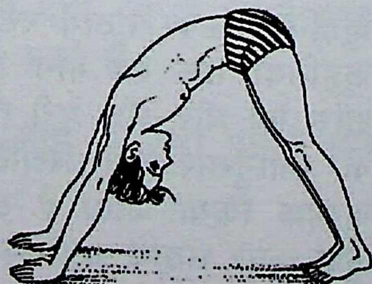
7. सप्तम स्थिति (भुजंगासन/सर्पासन)– मन में ऊँ ह्रां हिरण्य गर्भाय नमः (ध्यान– स्वाधिष्ठान चक्र) करते हुये, छाती से सिर तक के भाग को ऊपर उठाते हैं। शरीर का भार दोनों हाँथों पर रखते हैं। हथेलियाँ समान अन्तर पर फर्श से सटी रहे



तथा उनसे ऊपर कन्धों तक बाहें तनी रखते हैं। इस स्थिति में साँस भरते हुये सीना और गर्दन को ऊपर उठाकर सर्प या सिंह की भाँति सामने की ओर देखते हैं।

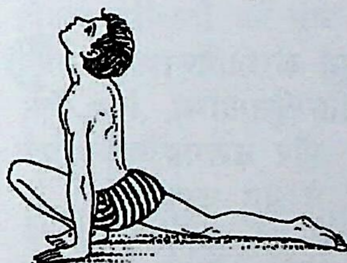
लाभ– शरीर कान्तिमय बनता है, रक्त परिभ्रमण ठीक होता है। महिला/पुरूष जनन ग्रन्थी के रोग दूर होते हैं।

8. अष्टम स्थिति (भूधरासन)– मन में ऊँ ह्रीं मरीचये नमः (ध्यान– विशुद्धि चक्र) का जाप करते हुये, दोनों हाँथों को सिर के सामने जमीन पर रखते हैं। पंजा आगे बाहर की ओर रहता है। इस स्थिति में नितम्ब भाग को अधिकाधिक ऊपर ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं। परन्तु धड़ भाग में कड़ापन होना (तना होना) चाहिए तथा घुटना भी सीधा ताने रखते हैं, यह ध्यान रखना चाहिए।



लाभ– हाँथ–पैर, घुटनों का दर्द मिटता है, कमर की चर्बी को घटाता है और लचीली बनाता है, पेट का रोग दूर होता है।

9. नवम स्थिति (एक पाद–प्रसरणासन)– मन में ऊँ ह्रं आदित्याय नमः (ध्यान– आज्ञा चक्र) का जाप करते हुये, (यह चौथी स्थिति जैसी है, केवल पैर बदल कर करते हैं) एक पैर आगे रखकर घुटनों से मोड़ते हैं, साथ ही साथ दोनों हाँथों को ऊपर ले जाकर, हथेलियों को अन्दर की ओर रखते हैं तथा पंचम की स्थिति में आते हैं। इस स्थिति में साँस लेते व छोड़ते रहना चाहिए।



10. दशम स्थिति (हस्त–पादासन)– मन में ऊँ ह्रैं सवित्रे नमः (ध्यान– स्वाधिष्ठान चक्र) का जाप करते हुये, यह तीसरी स्थिति जैसी है, रेचक प्राणायाम करते हुये (श्वास को बाहर निकालते हुये) तृतीय स्थिति को दुहराते हैं।





11. एकादश स्थिति (उर्ध्व नमस्कार–आसन)– मन में ऊँ ह्रौं अर्काय नमः (ध्यान– विशुद्धि चक्र) का जाप करते हुये, (यह दूसरी स्थिति जैसी है) पूरक प्राणायाम (श्वास भीतर खींचते हुये) करते हुये सीधे खड़े होकर द्वितीय स्थिति को दुहराते हैं।

12. द्वादश स्थिति (नमस्कार– आसन) – मन में ऊँ ह्रः भास्कराय नमः (ध्यान– अनाहत चक्र) का जाप करते हुये, (यह पहली स्थिति जैसी है) रेचक प्राणायाम (श्वास बाहर निकालते हुये) करते हुये सीधे खड़े होकर प्रथम स्थिति में दुहराते हैं।



अपने अर्थों के अनुरूप सूर्य के विभिन्न नाम मन्त्र कर्त्ता में मैत्री, भक्ति (समर्पण), ऊर्जा स्वास्थ्य, शक्ति तेजस्विता और उत्साह के गुण भरते हैं, क्योंकि ध्यान में वह परम सत्ता के एकात्म होकर उन गुणों का मनन करता है। इसलिए बारहों क्रियाओं में मन्त्र जाप का विधान है। प्रत्येक नमस्कार क्रिया का एक मन्त्र है क्रिया को करने के साथ–साथ उसी क्रम का मन्त्र जाप भी करना चाहिए।

'ऊँ' ओंकार व बीज मन्त्र (ह्रां आदि) के निलंबित उच्चारण के साथ ध्यान लगाने से रक्त परिभ्रमण और श्वसन संस्थानों से सम्बद्ध स्नायु केन्द्र प्रभावित और उत्तेजित होते हैं जिससे अधिक सक्रिय एवं कार्यक्षम तथा स्वस्थ होते हैं।

मन्त्र जाप के साथ बारह क्रियाओं का अभ्यास धीरे–धीरे बढ़ाते हुये नौ बार तक दुहराकर कुल 108 नमस्कार क्रिया की जा सकती है। ऐसा करने पर मंत्र जाप की एक माला (108–मनके की) पूरी हो जाती है।

सूर्य नमस्कार की सभी क्रियाओं का प्रतिदिन 8–9 बार पुनरावर्तन करना (दुहराना) पर्याप्त है। अभ्यास समाप्ति के पश्चात् कुछ समय तक शवासन की स्थिति में रहकर विश्राम करना चाहिए।

सूर्य नमस्कार से श्वसन संस्थान पुष्ट तथा नीरोग रहता है। शारीरिक बल के साथ–साथ मानसिक शक्ति भी मिलती है। शरीर में रोग निरोधक क्षमता की वृद्धि होती है। इससे माँस–पेशियाँ तथा स्नायु तन्तु मजबूत होकर ग्रन्थियों को पुष्ट बनाती है। यह व्यायाम सरल है, स्त्री–पुरूष एवं बाल–वृद्ध के लिए हितकर है। विश्व के सभी धर्म, जाति, लिंग, रंग–भेद के बिना सभी के लिए स्वास्थ्यवर्धक है।

विशेष– सूर्य नमस्कार की सभी क्रियाएँ लयबद्ध तरीके से क्रमबद्ध बिना रूके हुये करना चाहिए।

महर्षि पतंजलि ने कहा है –

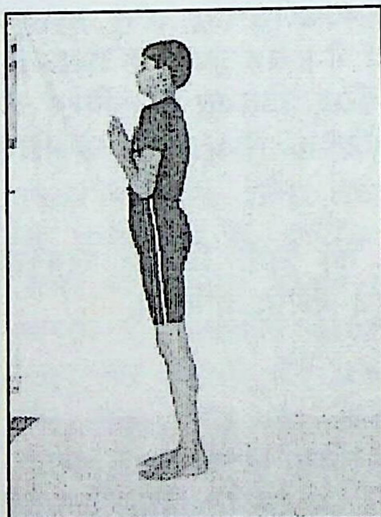
भुवनज्ञानं सूर्ये संयमात्।।

(पा.यो.द. विभूतिपाद 3/26)

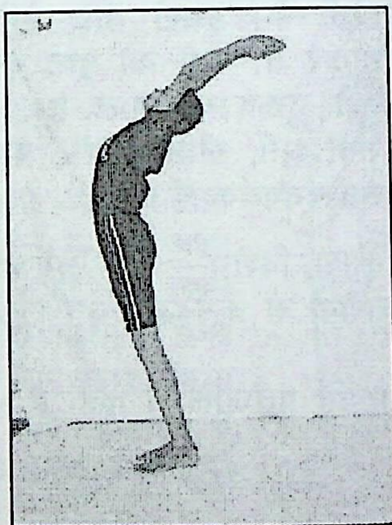
सूर्य में संयम करने से समस्त लोकों का ज्ञान प्राप्त हो जाता है (पुराणों में 14–भुवनों का वर्णन आता है, उसमें से एक भूलोक है। उन 14–भुवनों का ज्ञान सूर्य के संयम करने से हो जाता है।)



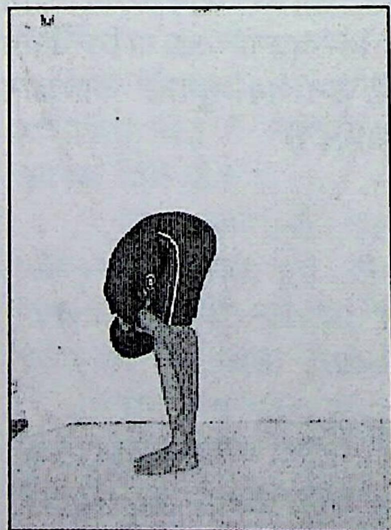
सूर्य-नमस्कार बालयोगी गौरव की भंगिमाएँ एवं संस्थितियाँ



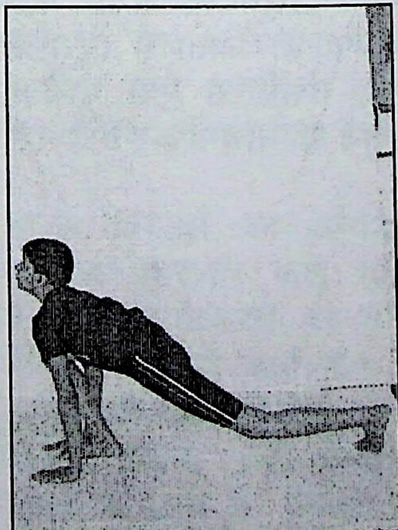
१. नमस्कार-आसन



२. उर्ध्व नमस्कार-आसन

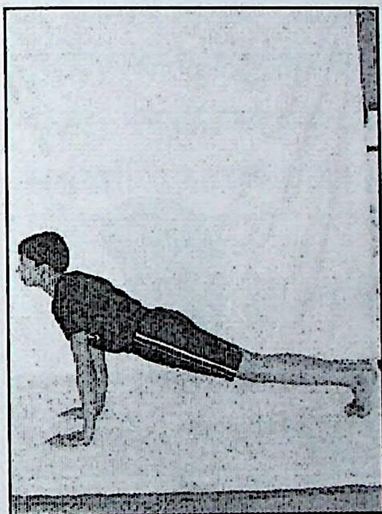


३. हस्त-पादासन

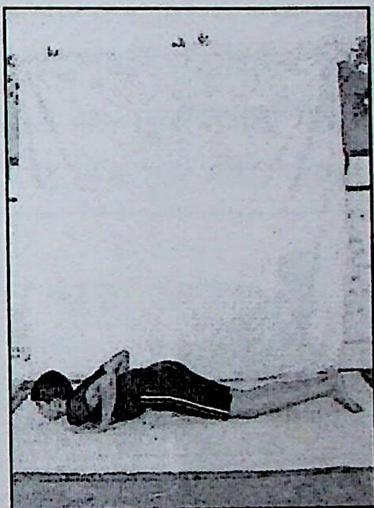


४. एकपाद-प्रसरणासन

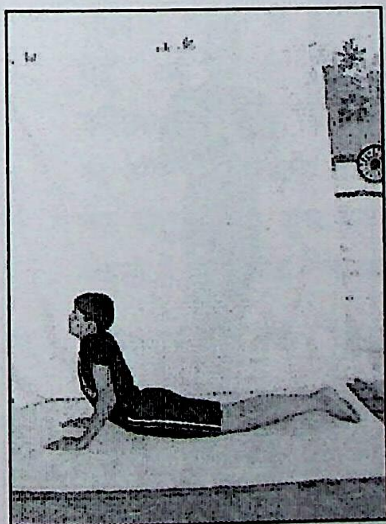
सूर्य–नमस्कार बालयोगी गौरव की भंगिमाएँ एवं संस्थितिया



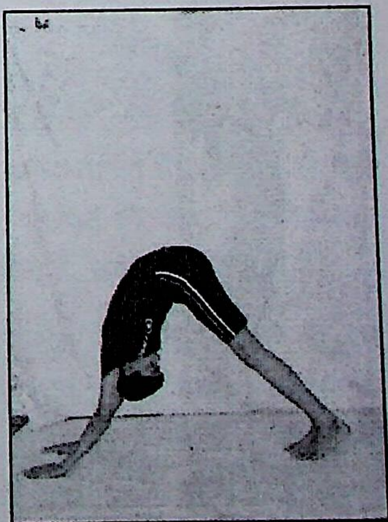
५. द्विपाद–प्रसरणासन/दण्डासन



६. अष्टांग पर्णिपातासन/प्रणमासन

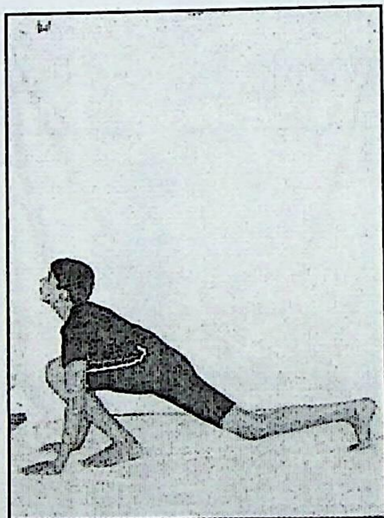


७. भुजंगासन / सर्पासन



८. भूधरासन / पवर्तासन

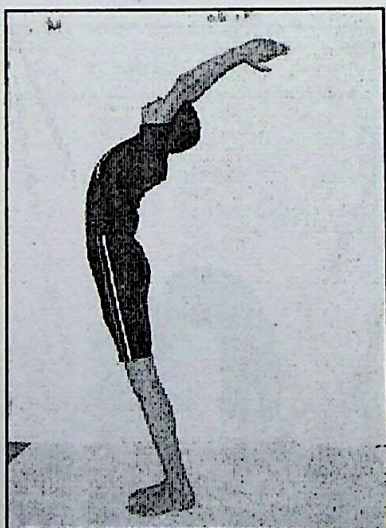
सूर्य-नमस्कार बालयोगी गौरव की भंगिमाएँ एवं संस्थितिया



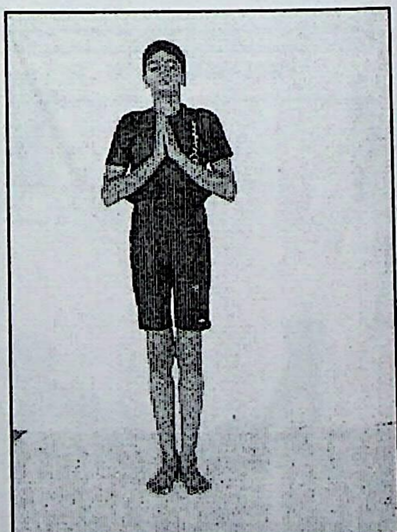
९. एकपाद-प्रसरणासन



१०. हस्त-पादासन



११. उध्र्व नमस्कार-आसन



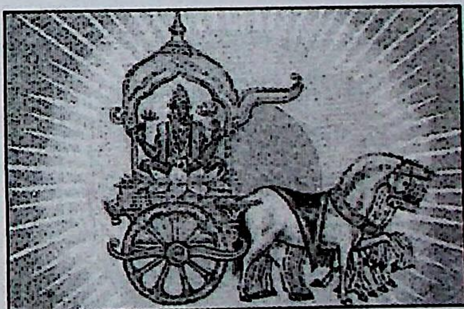
१२. नमस्कार-आसन

अध्याय- १७

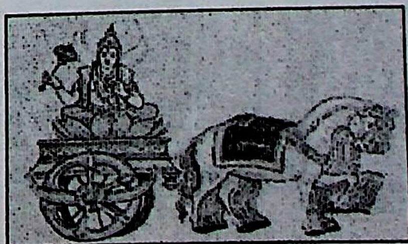
सूर्यदेव का सप्ताहवार व्रत एवं ग्रहानुसार रत्न धारण का फल, नवग्रह का प्रभाव राशियों पर, सूर्योपासना पर्व सूर्यषष्ठी पूजा एवं मकर संक्रान्ति, देव वृक्ष नीम/नीम्ब

सूर्यदेव का प्रत्येक दिन का व्रत उपवास

१. रविवार का व्रत (सूर्य व्रत)- एक वर्ष में तीस या बारह रविवार का व्रत करना चाहिए। व्रत के दिन लाल वस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन में गेहूँ की रोटी, दलिया, दूध, दही, घी और चीनी खाना चाहिए, नमक वर्जित है। इस व्रत से सूर्य का अशुभ फल शुभ फल में परिणित हो जाता है। तेजस्विता बढ़ती है, शारीरिक रोग शान्त होते हैं, आरोग्यता मिलती है।



२. सोमवार का व्रत (चन्द्रमा व्रत)- चौउवन सोमवार या दस सोमवार का व्रत के दिन सफेद वस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन बिना नमक के



दही, दूध, चावल, चीनी और घी से बनी चीजे खाना चाहिए। इस व्रत से व्यापार में लाभ, मानसिक कष्टों की शान्ति होती है। विशेष कार्य सिद्धि में यह व्रत पूर्ण लाभदायक है।

३. **मंगलवार का व्रत**– पैंतालीस या इक्कीस मंगलवारों के दिन व्रत को करना चाहिए। इससे अधिक भी किया जा सकता है। इस दिन लाल वस्त्र धारण करना चाहिए। गुड़ से बना लड्डू या हलवा खाना चाहिए, नमक वर्जित है। इस व्रत को करने से ऋण/कर्जों से छुटकारा मिलता है तथा संतान सुख प्राप्त होता है।



४. **बुधवार का व्रत**– पैंतालीस या इक्क़ीस या सत्तरह बुधवारों के दिन करना चाहिए। हरे रंग का वस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन नमक रहित मूँग से बनी चीजें खानी चाहिए। जैसे– मूँग का हलवा, लड्डू, पंजीरी। भोजन से पहले तीन तुलसी के पत्ते या चरणामृत या गङ्गा जल के साथ खाकर तब भोजन करना चाहिए। इस व्रत से विद्या, धन, व्यापार की उन्नति और शरीर स्वस्थ रहता है।



५. **वृहस्पति का व्रत**- तीन वर्ष, एक वर्ष या १६-वृहस्पतिवार का करना चाहिए। पीला वस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन में चने के बेसन का लड्डू, घी-चीनी से बनी मिठाई खानी चाहिए। विद्यार्थीयों के लिए बुद्धि और विद्याप्रद है क्योंकि वृहस्पतिदेव देवताओं के गुरु हैं।



इस व्रत से धन की स्थिरता, यश की वृद्धि होती है। अविवाहितों के लिए यह व्रत विवाह में सहायक होता है।

६. **शुक्रवार का व्रत**- एकतीस या इक्कीस शुक्रवार को करना चाहिए। भोजन में चावल, चीनी, दूध, दही, घी से बने पदार्थ को खाना चाहिए। इस व्रत को करने से सुख सौभाग्य और ऐश्वर्य की वृद्धि होती है।



७. <u>शनिश्चर का व्रत</u>- इक्यावन या उन्नीस शनिवार को करना चाहिए तथा कालावस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन में उड़द के आटे से बनी चीजें, पकौड़ी, चिल्ला, बड़ा आदि खाना चाहिए। तेल से बनी चीजें अवश्य खाना चाहिए, फल में केला खाना चाहिए। इस व्रत को करने से सब प्रकार की सांसारिक झंझटें दूर होती हैं। झगड़ों में विजय प्राप्त होती है। लोहे, मशीनरी कारखाने वालों के लिए यह व्रत व्यापार में उन्नति और फलदायक है।



८-९.<u>राहु और केतु (धूमकेतु) का व्रत</u>- अट्ठारह शनिवार को करना चाहिए। कालावस्त्र धारण करना चाहिए। भोजन में मीठा



८- राहु



९- केतु

चूरमा, मीठी रोटी, रेवड़ी, काले तिल का लड्डू, गजक खाना चाहिए (रात में घी का दीपक पीपल वृक्ष की जड़ में रखना चाहिए, अगर आस-पास पेड़ हो)। इस व्रत से शत्रु का भय दूर होता है। मुकदमें में विजय मिलती है और सम्मान बढ़ता है।

विशेष- पहनने का वस्त्र न हो तो उस रंग के मोटे धागे को हाँथ में बाँध कर या रूमाल रख कर भी उसका फल प्राप्त किया जा सकता है।

नवग्रह का प्रभाव बारह राशियों पर

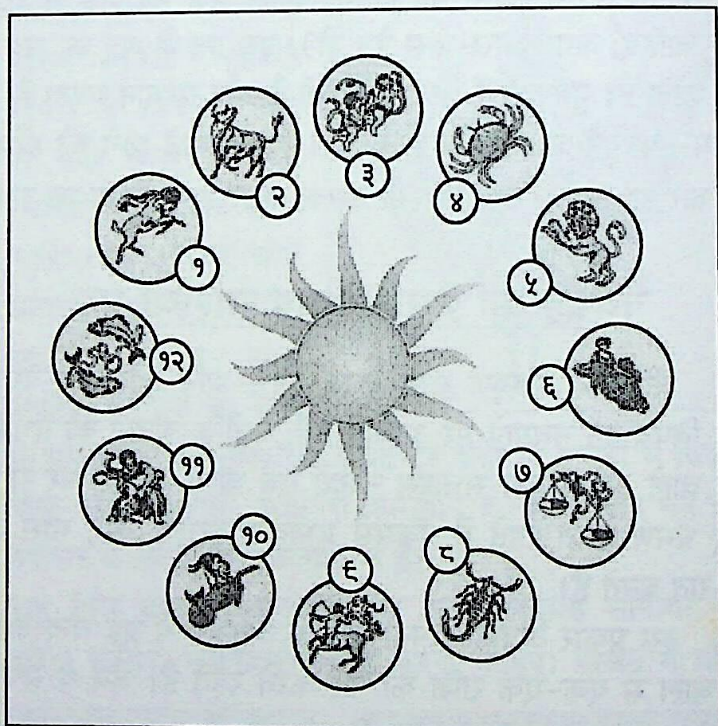
जीवन के सम्पूर्ण सुख-दुःख, लाभ-हानि और जय-पराजय आदि विषय इन नवग्रहों पर आधारित हैं; क्योंकि जीवन को प्रभावित करने वाले आकाशस्थ सत्ताइस नक्षत्रों एवं बारह राशियों पर से ग्रह सतत् भ्रमण करते रहते हैं, जिससे प्रभावक ऋतुएँ, वर्ष, मास और दिन-रात बनते हैं।

इस प्रकार अपनी-अपनी गति के अनुरूप ये ग्रह मन्द अथवा तीव्र चाल से एक-एक राशि को पार करते रहते हैं। जब ये सप्तग्रह सूर्य के समीप अंशों में एक ही राशि पर होते हैं, तब अस्त माने जाते हैं। इन राशियों के नामः-

१. मेष, २. वृषभ, ३. मिथुन, ४. कर्क, ५. सिंह, ६. कन्या, ७. तुला, ८. वृश्चिक, ९. धनु, १०. मकर, ११. कुम्भ, १२. मीन।

नवग्रह- सूर्य, चन्द्रमा (सोम), मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनिश्चर, राहु, केतु।

बारह राशियाँ



१. मेष, २. वृषभ, ३. मिथुन, ४. कर्क, ५. सिंह, ६. कन्या, ७. तुला, ८. वृश्चिक, ९. धनु, १०. मकर, ११. कुम्भ, १२. मीन।

नाम के अनुसार इन्हीं राशियों पर स्थित ग्रहों की चाल देख कर बताया जाता है कि अमुक व्यक्ति के लिए अमुक समय अच्छा या बुरा है। नवग्रहों को बारह राशियों का स्वामी चुना गया है।

मेषवृश्चिकयोर्भौमः शुक्रो वृषतुलाधिपः।
बुधः कन्यामिथुनयों कर्कस्याधिपतिः शशी।।
सिंहस्याधिपतिः सूर्यो गुरुश्च धनुमीनयों।
विज्ञैरधिपतिः प्रोक्तः शनिर्मकरकुम्भयोः।।

'मेष-वृश्चिक का स्वामी मङ्गल, वृष-तुला के शुक्र, कन्या-मिथुन के बुध, कर्क के चन्द्रमा, सिंह के सूर्य, धनु-मीन के गुरु और मकर-कुम्भ के स्वामी शनि माने गये हैं।'

मनुष्य की आयु १२०-वर्ष मानी गयी है, जिसमें सूर्य की दशा ६-वर्ष, चन्द्रमा की १०-वर्ष, मङ्गल की ७-वर्ष, राहु की १८-वर्ष, वृहस्पति की १६-वर्ष, शनि की १९-वर्ष, बुध की १७-वर्ष, केतु की ७-वर्ष और शुक्र की २०-वर्ष तक क्रमानुसार प्रत्येक मनुष्य के जीवन में आती है।

जब जन्मकुण्डली अथवा वर्षकुण्डली में कोई ग्रह बुरे स्थान में बैठे हुए होकर अपना अच्छा असर नहीं करते, तब कहा जाता है कि 'अमुक ग्रह खराब हैं, इसके लिए दान-पुण्य-आराधना करनी-करानी चाहिए।

'कौन सा रत्न किस ग्रह को प्रसन्न कर उसका दोष दूर करता है'

माणिक्यं तरणेः सुजातममलं मुक्ताफलं शीतगो-
र्माहेयस्य तु विद्रुमो निगदितः सौम्यस्य गारुत्मतम्।
देवेज्यस्य पुष्यरागमसुराचार्यस्य वज्रं शने-
र्नीलं निर्मलमन्ययोर्निगदिते गोमेदवैदूर्यके।।

रत्नमाला ग्रन्थ में वर्णित है कि– १. सूर्य का रत्न **माणिक्य** है। २. चन्द्रमा का रत्न सुन्दर निर्दोष गोल **मोती** है। ३. मङ्गल का **मूँगा**। ४. बुध का **पन्ना**, ५. वृहस्पति का **पुखराज**, ६. शुक्र का **हीरा**, ७. शनि का निर्मल **नीलम**, ८. राहु का **गोमेद**, ९. केतु का रत्न **लहसुनिया** है।

इन रत्नों को धारण करने से इन ग्रहों की प्रसन्नता प्राप्त होती है और इनका अनिष्टकर दोष दूर हो जाता है।

आयुर्वेद के भावप्रकाश नामक ग्रन्थ में रत्नों के गुणप्रकरण में लिखा है कि– **'रत्नानि मनोज्ञानि ग्रहदोषहराणि च'** अर्थात् रत्न सुन्दरता को देते हैं और ग्रह दोषों को हरण करते हैं।



१. **<u>माणिक/माणिक्य (RUBY)</u>**– माणिक सूर्यग्रह का प्रतिनिधि ग्रह है। माणिक लाल रंग की गर्म किरणें संवारित करता है। सूर्यग्रहों का राजा है। माणिक धारण करने वाला व्यक्ति साहसी, बल एवं आत्मविश्वास से परिपूर्ण होता है। यश–मान–प्रतिष्ठा बढ़ती है, भाग्योदय होता है। माणिक हृदय रोग, अस्थि रोग, नेत्र रोग तथा अन्य बहुत से रोगों को नियन्त्रित करता है। लाल माणिक्य को सोने की अँगूठी में जड़वाकर रविवार को अनामिका अँगुली में धारण करना चाहिए।

२. <u>मोती/मुक्ता (PEARL)</u>- मोती चन्द्रमा ग्रह से सम्बन्धित है। मोती में शीत रश्मि का प्रवाह होता है। मोती धारण करने से शारीरिक एवं मानसिक शक्ति, रूप, सौन्दर्य, ज्ञान-विवेक, स्मरण-शक्ति एवं बुद्धि में वृद्धि होती है। बुरे विचारों का शमन होता है। मोती मानसिक विकार, चिड़चिड़ापन, स्नायु दुर्बलता, दृष्टि की कमजोरी, सर्दी, जुकाम, ज्वर, मधुमेह आदि रोगों को दूर करने में अत्यन्त प्रभावकारी है। मोती किसी अन्य सामजस्य रत्न के साथ पहनना चाहिए। केवल मोती या मून स्टोन लाभकारी नहीं है। सफेद मोती चाँदी की अँगूठी में जड़वाकर सोमवार को कनिष्ठा अँगुली में धारण करना चाहिए।

३. <u>मूँगा (CORAL)</u>- मङ्गल ग्रह का रत्न है। यह लाल रंग का होता है, यह गरम रत्न है। लालरंग की किरणों का विकीर्ण करता है। यह धारण कर्ता को साहस, बल, शौर्य, धन, सुख, सम्पदा प्रदान करता है। मङ्गल ग्रह बुखार, खाँसी, सर्दी, नपुंसकता, उच्च-रक्तचाप, जोड़ों का दर्द तथा मूत्र विकार आदि रोगों का शमन करता है। लाल मूँगा सोने की अँगूठी में जड़वाकर मङ्गलवार को अनामिका अँगुली में धारण करना चाहिए।

४. <u>पन्ना (EMARALD)-</u> हरे रंग का रत्न है जो बुध ग्रह से सम्बन्धित है। यह एक शीतल रत्न है। हरे रंग की किरणें विकीर्ण करता है। बुध ग्रह व्यापार, धन, बुद्धिमत्ता, वाकशक्ति तथा तर्कशक्ति का प्रतिनिधि ग्रह है। बुध ग्रह के सम्पूर्ण नाड़ी स्थान को प्रभावित एवं संचारित करता है। आंत, लीवर, तिल्ली, फेफड़े, मस्तिष्क, वाणी, जिह्वा का स्वामी ग्रह है। पन्ना धारक व्यक्ति पर विष (जहर) का प्रभाव बहुत कम होता है।

सात्विकता एवं दाम्पत्य जीवन में सहायक है। आँखों के लिए अत्यन्त शीतल रत्न है। हरापन्ना चाँदी की अँगूठी में जड़वाकर बुधवार को कनिष्ठा अँगुली में धारण करना चाहिए।

५. पुखराज (TOPAZ)- वृहस्पति ग्रह का रत्न है, यह पीले रंग का होता है और शीतल किरणों का विकीर्ण करता है। धारण कर्ता सदा प्रसन्न रहता है। पुखराज से सम्मान, विद्या, परिवार का सुख मिलता है। व्यक्ति को नैतिक व सात्विक बनाता है। शरीर में लीवर, जाँघ, चर्बी, प्रजनन अंगों, मोटापा, जोड़ों के दर्द आदि का निवारण करता है। पीले रंग का पुखराज धारण करने से पुत्र की प्राप्ति होती है और व्यक्ति भाग्यशाली होता है। जीवन में सफलता प्राप्त करता है। पीले रंग का पुखराज सोने की अँगूठी में जड़वाकर गुरुवार को तर्जनी अँगुली में धारण करना चाहिए।

६. हीरा (DIAMOND)- यह शुक्र ग्रह का प्रतिनिधि रत्न है यह आसमानी रंग का शीतल किरणों को संचारित करता है। हीरा महिलाओं का प्रिय रत्न है। रूप सौन्दर्य वर्धक और पत्निसुख प्रदान करने वाला रत्न है। शुक्र ग्रह कला और सौन्दर्य का प्रतीक है। हीरा धारण करने वाले व्यक्ति के ऊपर जादू-टोना, तन्त्र-मन्त्र का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है तथा आकस्मिक विपदाओं से रक्षा करता है। सफेद हीरा चाँदी या प्लेटिनम की अँगूठी में जड़वाकर शुक्रवार को कनिष्ठा अँगुली में धारण करना चाहिए।

७. नीलम (SAPPHIRE)- शनि ग्रह का रत्न है। बिना ज्योतिष सलाह के धारण नहीं करना चाहिए। नीलम में त्वरित रूप से शुभ एवं अशुभ प्रभाव दिखाने की आश्चर्यजनक शक्ति समाहित

है। नीलम ही एक मात्र ऐसा रत्न है जो व्यक्ति को पल में रंक से राजा और राजा से रंक बना देने की शक्ति रखता है। शनि की दशा, लकवा, गठिया, बहरापन, दंतरोग, वायुरोग आदि रोगों को दूर करने की क्षमता नीलम में विद्यमान है। नीलम शनि के दुष्प्रभावों से धारक को मुक्त करता है। स्त्रियों के बांझपन को भी दूर करता है। गहरा नीला नीलम स्टील के अँगूठी में जड़वाकर शनिवार को मध्यमा अँगुली में धारण करना चाहिए।

८. गोमेद (ZIRCON)- यह राहु ग्रह का रत्न है, यह शीतल अल्ट्रावायलेट किरणें विकीर्ण करता है, राहु का प्रभाव शनि के प्रभाव के अनुरूप माना है। राहु के दोषित होने पर गोमेद धारण करना चाहिए। इसके धारण से सर्व प्रकार से उन्नति होती है। स्वास्थ्य, सुख, सम्पत्ति, प्रसन्नता, मानसिक शान्ति, वैचारिक स्थिरता तथा समृद्धि में वृद्धि होती है। गोमेद धारण करने से यकृत रोग, चेचक, कब्ज, पंचनांगों का कमजोर होना, भूख की कमी, पथरी रोग को दूर करता है। सक्रिय राजनीति में जो लोग हैं उन्हें गोमेद अवश्य धारण करना चाहिए। वेदाग गोमेद सीसा (लेड)/गिलट/चाँदी की अँगूठी में जड़वाकर दाहिने हाँथ की मध्यमा अँगुली में शनिवार को धारण करना चाहिए।

९. लहसुनिया (CAT'S EYES)- यह केतु का रत्न है यह बहुत ही गर्म इन्फ्रारेड कास्मिक किरणें विकीर्ण करता है। केतु ग्रह को मङ्गल ग्रह के समान माना गया है। लहसुनिया धारण करने से बल, तेज, पराक्रम, सुख, आनन्द, सम्पत्ति तथा परिवार में वृद्धि होती है। दुःख दारिद्र्य दूर करता है। लहसुनिया विभिन्न चर्मरोग, हृदयरोग, अजीर्ण, खुजली, खसरा आदि रोगों में लाभकारी है। यह गुप्त तरीके से धन लाभ कराता है।

लहसुनिया धारक आध्यात्मिक क्षेत्र में आशातीत प्रगति कर सकता है तथा भूत-भविष्य वर्तमान का ज्ञाता बनाने में सक्षम है। लहसुनिया रत्न स्टील की अँगूठी में जड़वाकर दाहिने हाँथ की मध्यमा अँगुली में शनिवार को धारण करना चाहिए।

नवरत्न की अँगूठी धारण करना अधिक लाभकारी होता है। यह अँगूठी सोने में दोषरहित रत्न जो त्वचा से स्पर्श करती रहे मुख्य रत्न से सम्बन्धित ग्रहों तथा धातु में ही अँगूठी रविवार को दाहिने हाँथ की अनामिका अँगुली में धारण करना चाहिए। अँगूठी के अलावा नवरत्नों को गले में लॉकेट के रूप में या बाजूबन्ध में पहना जा सकता है।

विशेष- रत्नों की शुद्धता व धातु की प्रमाणिकता एवं त्वचा से स्पर्श करना तथा शुभ घड़ी में धारण करना लाभदायक होता है।

सूर्योपासना का मुख्य पर्व श्रीसूर्यषष्ठी पूजा

कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की षष्ठी तिथि को भगवान सूर्य की उपासना का मुख्य पर्व है। इस पर्व को लोक व्यवहार में डालाछठ (श्रीसूर्यषष्ठी) के नाम से जाना जाता है। ब्रह्मा जी की मानस पुत्री षष्ठी देवी जो विश्व के समस्त बालकों की रक्षिता हैं व अपुंत्रों को पुत्र प्रदान करती हैं-

'पुत्रदाऽहम् अपुत्राय'

ब्रह्मवैवर्त पुराण (प्रकृति खण्ड- ४३/४, ६) में विष्णुमाया षष्ठी देवी बालकों की रक्षिका एवं आयुप्रदा हैं।

सृष्टि की अधिष्ठात्री पंच देवियाँ- दुर्गा, राधा, लक्ष्मी, सरस्वती और सावित्री प्रकृति देवी कहलाती हैं। इन्हीं देवी का अंश, कला,

कलांश और कलांशांश के भेद के अनेक रूप हैं जो विश्व की समस्त स्त्रियों में दिखलाई पड़ती है। मार्कण्डेय पुराण में कहा है–

'स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।'

प्रकृति देवी के एक प्रधान अंश को 'देव सेना' कहते हैं जो सबसे श्रेष्ठ मातृका मानी जाती हैं। ये समस्त लोकों के बालकों की रक्षिका देवी हैं। प्रकृति का छठा अंश होने के कारण इनका नाम 'षष्ठी' भी है।

जिस प्रकार गणेशजी की पूजा के लिए चतुर्थी तिथि प्रसिद्ध है। विष्णुजी की पूजा के लिए एकादशी तिथि प्रशस्त मानी जाती है। इसी प्रकार सूर्य के साथ सप्तमी की तिथि है जो सूर्य सप्तमी, रथसप्तमी, अचलासप्तमी इत्यादि है। बिहार में षष्ठी तिथि का समन्वय सूर्य सप्तमी से विशेष महत्व का है। इस व्रत में सूर्यषष्ठी भगवान सूर्य का व्रत है, इस व्रत में सर्वतोभावेन भगवान सूर्य की पूजा की जाती है। सूर्यषष्ठी में षष्ठीमाता और भगवान सूर्य के लोकगीत गाते हुये भगवान भास्कर को सायं कालीन अर्घ्य स्वीकार कर अस्ताचल को न चले जायें सूपों और डलियों पर जगमगाते हुये घी के दीपक के साथ गङ्गा तट पर पर्व मनाते हैं। पुनः ब्रह्ममुहुर्त में ही नूतन अर्घ्य सामग्री के साथ सभी व्रतीजन जल में खड़े होकर हाँथ जोड़े हुये भगवान भास्कर के उदय होने की प्रतिक्षा करते है तथा जैसे ही क्षितिज पर अरुणिमा दिखाई देती है वैसे ही मन्त्रों के साथ भगवान सविता को अर्घ्य समर्पित किये जाते हैं। यह व्रत विसर्जन ब्राह्मण दक्षिणा एवं पारणा के पश्चात् पूर्ण होता है। इस प्रकार भगवान सूर्य के इस पावन व्रत में शक्ति और ब्रह्म दोनों की उपासना का फल एक साथ मिलता है।

सांसारिक जनों की तीन एषणाएँ प्रसिद्ध है– पुत्रैषणा, वित्रैषणा तथा लोकैषणा। भगवान सविता (सूर्य) प्रत्यक्षदेव हैं जो समस्त

अभिष्टों को प्रदान करने में समर्थ हैं। परब्रह्म की शक्ति स्वरूपा प्रकृति (प्रकृति शब्द की व्याख्या प्रकृति के 'प्र' का अर्थ प्रकृष्ट और कृति का अर्थ सृष्टि अर्थात् प्रकृष्ट सृष्टि) और उन्हीं के प्रमुख अंश से अविर्भूता देवी षष्ठी, संतति प्रदान करने के लिए मुख्य अधिकृत देवी हैं। उपासना के फलस्वरूप स्त्रियाँ धन-धान्य, पति-पुत्र तथा सुख समृद्धि से परिपूर्ण व संतुष्ट रहती हैं। सूर्य की उपासना से पति-पुत्र का लाभ तो होता ही है साथ ही भगवान भास्कर के सप्तरंगी किरणों से चर्म व नेत्र रोगों के असाध्य व्याधियों से भी छुटकारा मिलता है। पुत्रवती व सौभाग्यवती स्त्रियाँ इस व्रत का पालन करती हैं। पुत्र की कामना करने वाले स्त्री-पुरूष दोनों ही इस व्रत को करते हैं।

मकर संक्रान्ति

सूर्योपासना का मकर संक्रान्ति पर्व विश्वभर में अपनी-अपनी मान्यता एवं परम्परानुसार मनाया जाता है। मकर संक्रान्ति का पर्व प्रायः प्रतिवर्ष १४-जनवरी को पड़ता है। आज से १००-१२५ वर्ष पूर्व १२ या १३ जनवरी को पड़ता था। किन्तु आज कल ये पर्व १४ या १५ जनवरी को पड़ता है। खगोल शास्त्रियों के अनुसार इस दिन सूर्य अपनी कक्षाओं में परिवर्तन कर दक्षिणायण से उत्तरायण होकर मकर राशि में प्रवेश करते हैं। जिस राशि में सूर्य की कक्षा का परिवर्तन होता है, संक्रमण या संक्रान्ति कहते हैं। मकर संक्रान्ति से सूर्य उत्तरायण हो जाते हैं, गरमी का मौसम आरम्भ हो जाता है तथा दिन बड़ा और रात्रि छोटी होने लगती है। मकर संक्रान्ति का पर्व बंगाल के 'गंगासागर' स्थान पर मनाया जाता है। जो 'गंगासागर तीर्थ' के नाम से विख्यात है।

इलाहाबाद (उ.प्र.) में प्रयाग संगम स्थल पर प्रतिवर्ष माघ मेला व स्नान एक मास तक चलता है, जिसे कुम्भमेला तथा कल्पवास भी कहते हैं। जो छः वर्ष में अर्धकुम्भ तथा बारह वर्ष में महाकुम्भ होता है। मकर संक्रान्ति से सूर्य की गति तिल-तिल बढ़ती है। अतः इस दिन तिल का विशेष महत्त्व है तथा तिल के विभिन्न मिष्ठान, खिचड़ी बनाकर लोगों को वितरित किया जाता है।

पंजाब व जम्मूकाश्मीर में 'लोहिड़ी' नाम से यह मकर संक्रान्ति पर्व मनाया जाता है। सिन्धी समाज मकर संक्रान्ति के एक दिन पूर्व 'लाल लोही' के रूप में मनाते हैं।

मकर संक्रान्ति (पोंगल) दक्षिण भारत में यह पर्व सूर्य के उत्तरायण काल में मनाया जाता है। पोंगल का अर्थ खिचड़ी का त्योहार। घर के खुले आंगन में हल्दी की गाँठ को पीतल के पात्र या मिट्टी की हान्डी की गर्दन में पीले धागे से बाँधकर चावल और मूँग की दाल की खिचड़ी पकाते हैं। इसमें उफान आने पर दूध और घी डालते हैं और 'पोंगल-पोंगल' की आवाज लगाकर गाजे-बाजे के साथ खुशी जाहिर करते हैं। सूर्यदेव की गन्ने के साथ पूजा होती है और सूर्यदेव से सुख समृद्धि की कामना करते हैं।

भारतीय ज्योतिष के अनुसार मकर संक्रान्ति के दिन सूर्य के एक राशि से दूसरी राशि में हुये परिवर्तन को अंधकार से प्रकाश की ओर हुआ परिवर्तन माना जाता है। मकर संक्रान्ति से दिन बड़ा होने लगता है प्रकाश बढ़ जाता है। रात्रि छोटी होने से अंधकार की अवधि कम होती है। सूर्य ऊर्जा का अजस्त्र स्रोत है। इसके अधिक समय तक चमकने से प्राणि जगत् में चेतनता और कार्यशक्ति की वृद्धि हो जाती है। इसलिए मकर संक्रान्ति पर्व मनाने का विशेष महत्त्व है।

दक्षिण भारत में मेष संक्रान्ति के दिन से तमिल मास का शुभारम्भ होता है, जिसे वर्षपिरप्पु कहते हैं। कर्नाटक में यही पर्व 'उगादिपाडया' नाम से जान जाता है। मलयालम में 'विषु' नाम से प्रचलित है। इसी दिन पंचाग पूजा करके पढ़ा जाता है। इसी दिन नीम के फूलों का बड़ा महत्त्व है, जिसे 'वेपप्पू' कहते हैं। वर्ष पर्यन्त नीरोग एवं स्वस्थ रहने हेतु नीम के फूल को सभी भोज्य पदार्थ में मिलाया जाता है। क्योंकि इसमें सर्व रोग हरने की क्षमता होती है। नीम का फूल रोग रहित जीवन की कामना का प्रतीक है।

रथसप्तमी माघ मास के शुक्ल पक्ष की सप्तमी 'रथसप्तमी' कहलाती है। उत्तरायण की ओर सूर्य का रथ होता है। इस दिन सूर्यरथ बनी बृहदाकार रंगोली बनायी जाती है, जो जमीन पर 'कोलम' उकेरी जाती है। हस्त निर्मित सूर्यरथ की रंगोली की पूजा की जाती है। यह पर्व केरल में मुख्य रूप से मनाते हैं।

देव वृक्ष- नीम्ब/नीम का महत्त्व

राजस्थान के पुष्कर क्षेत्र में नीम्बर्क सम्प्रदाय का एक मात्र आचार्य पीठ है। जो अखिल भरतीय श्री नीम्बार्काचार्य पीठ के नाम से जान जाता है। यह सूर्यदेव का अतिप्राचीन पौराणिक पुण्यमय तीर्थ है। पद्मपुराण (१५८/१/१-२४) में नीम्बार्क देवतीर्थ माहात्म्य नाम से मिलता है। पिप्पलादतीर्थ से कुछ दूर साम्रमती नदी के किनारे सम्पूर्ण अधिव्याधियों को मिटाने वाला पिचुमन्दाक (नीम्बार्कतीर्थ) है।

भगवान शंकर बिल्ववृक्ष (बेल) पर, श्रीविष्णु पीपल के वृक्ष पर, इन्द्रदेव शिरीष वृक्ष पर और सूर्यदेव नीम्ब वृक्ष (नीम) पर निवास करते हैं। अतः इन देव वृक्षों को काटना निषिद्ध माना जाता है।

पुराणों में जैसा वर्णित है जिस स्थान पर सूर्य ने नीम्ब वृक्ष पर निवास किया था, वह 'नीम्बार्क तीर्थ' कहलाया। इस तीर्थ में स्नान

करके नीम्बस्थ (नीम वृक्ष पर विराजमान) सूर्य-नीम्बार्क की पूजा की जाय तो व्यक्ति के समस्त रोग-दोष की निवृत्ति हो जाती है। नीम वृक्ष एक मात्र ऐसा वृक्ष है जिसकी लकड़ी, छाल, पत्ती, फूल, नीम का तेल आदि में सभी रक्त शोधक तत्त्व विद्यमान है। मनुष्य इसके सेवन से नीरोगी रहता है। सर्वविदित सुप्रसिद्ध सर्वत्र पाया जाने वाला ग्रीष्म मौसम में फलता, फूलता विशाल वृक्ष है। पुराणों में इसे अमृत स्वरूप माना है। नीम वृक्ष का पांचांग-फूल, फल, जड़, पत्ता एवं छाल रेशा-रेशा यानी जड़ से ऊर्ध्व तक वृक्ष औषधीय गुणों से सराबोर है। त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) को दूर करने की क्षमता वाला देव वृक्ष है। आजकल नीम के तेल का उपयोग दंतमंजन, तेल, साबुन, नीम की खली का उपयोग खेती में दीमक की रोकथाम में तथा औषधियों में विशेष रूप से बहुतायत तौर पर हो रहा है। प्राचीनकाल से नीम की दातुन करने का मुख और दाँत को निरोग बनाने के लिए होता आ रहा है। चर्मरोग के लिए नीम की छाल का लेप, नीम के तेल का प्रयोग अनादिकाल से होता आ रहा है।

आयुर्वेद में कहा गया है कि 'सर्वरोगहरो नीम्बः' नीम की कोपल नेत्र रोग, ग्रीष्म, कोढ़, कफ, कृमि, विष, अरुचि और अजीर्ण नाशक होती है। सूखे पत्ते का उपयोग भण्डारित खाद्य पदार्थों में रखने के लिए होता है। नीम ही एक ऐसा वृक्ष है जो जड़ से शिखर तक सारे के सारे काम आते हैं। नीम की छाया, छाल, पत्ता, फूल, फल, तना आदि सभी में मनुंष्य की तन्दुरुस्ती का राज छिपा है। नीम में अमृत का तत्त्व है, अमृत वही है जो मरते को जिलाये। नीम का मूल नाम नीम्ब है 'नीम्बति स्वास्थ्य ददाति' जो निरोग कर दे। मनुष्य जाति के त्रिदोष (वात-पित्त-कफ) दूर कर दे, निस्तेज को तेज से भर दे, कोढ़ी का कोढ़ दूर कर दे, अन्धे को रोशनी दे दे, निर्बल को महाबली बना दे।



अध्याय- १८

सूर्य-स्नान/सन-बाथ/आतप-स्नान/स्वेद-क्रिया एवं सूर्यकिरण चिकित्सा

अनादि काल से सूर्य स्नान का वर्णन हमारे प्राचीन ग्रन्थों वेद, पुराणों एवं आयुर्वेद ग्रन्थों में मिलता है। मत्स्यपुराण में कहा गया है कि **'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्'** यदि नीरोगता की इच्छा है तो सूर्य की शरण में जाओ। हमारे ऋषि मुनियों एवं आचार्यों ने इस पद्धति को प्रचलित किया था, जो आज भी प्रचलन में है। सूर्य स्नान मुख्यतः मनुष्य का शरीर निरोग रहे, स्वस्थ रहे, चर्मरोग मुक्त रहे, ऊर्जावान रहे, नेत्ररोग से मुक्त रहने के लिए किया जाता है। सूर्य स्नान आयुर्वेद में स्वेद क्रिया भी कहते हैं जिसमें शरीर से काफी मात्रा में पसीना निकलता है।

सूर्य स्नान प्रातःकाल से दोपहर तक ही करना चाहिए, दोपहर बाद सूर्य स्नान निषिद्ध है। सूर्य स्नान से शरीर के अन्तः तथा वाह्य रोगों कां इलाज होता है। प्रातःकालीन सूर्य के सामने नंगे बदन रहना अति स्वास्थ्यकारी है। सूर्य स्नान में कर्ता को अपने सिर पर तौलिया अवश्य रखना चाहिए तथा एक गिलास जल भी पीना आवश्यक है। नंगे बदन १५ से २० मिनट तक तथा सर्दी के मौसम में ३० से ३५ मिनट तक धूप में रहना चाहिए। इसके बाद ठण्डे जल से स्नान करने का विधान है। कुछ देर विश्राम करने के पश्चात् भोजन करना चाहिए।

ऊषाकाल में प्रतिदिन प्रातः उठना चाहिए और घूमते हुए सुखद वायु एवं प्रभात कालीन सूर्य की किरणों का सेवन करने वाला व्यक्ति सदैव नीरोग रहता है। सूर्य की किरणों द्वारा विटामिन-डी की

उत्पत्ति होती है। यही विटामिन-डी एक मात्र जो स्वयं सूर्यदेव अपने आप तैयार करते हैं। हमारे स्वास्थ्य के लिए अतिलाभदायक है। यही विटामिन-डी द्वारा ही शरीर मुख्य खनिज तत्त्वों को ग्रहण करता है। विशेष कर कैल्शियम और फासफोरस, इन्हीं तत्त्वों द्वारा शरीर की संरचना, हड्डियाँ और दाँत आदि का निर्माण होता है।

उदित होते हुए सूर्य की किरण-जाल में नंगे बदन सूर्य स्नान करने से मनुष्य की बनावट में आश्चर्यजनक परिवर्तन एवं शरीरिक शक्ति में अद्भुत लाभ मिलता है। वर्तमान शोध के अनुसार मस्तिष्क के सात भाग हैं। उनमें अलग-अलग शक्तियाँ निवास करती हैं। उन्हीं में अलग-अलग संस्कारों और परमाणुओं का वास है। सूर्य स्नान में ये सभी शक्तियाँ खिल उठती हैं। महिनों इनका सेवन करने से स्वानुभव होता है और वेदों की सत्यता तथा प्रमाणिकता से बोध होता है।

आजकल मनुष्य के जीवन में से ओज और तेज उड़ गया है, सत्त्वहीन आहार और तामसी आहार करने से उनकी आँखों की चमक, अंगों की स्फूर्ति सब नष्ट हो गयी है। दूध, घी, फल, पौष्टिक पदार्थ खाने वाले व्यक्ति की अपेक्षा, सूखी रोटी, फल, फूल, कन्द आदि पर जीवन निर्वाह करने वाले व्यक्ति सशक्त और तेजस्वी होते हैं। यह सब सूर्य प्रकाश का ही प्रताप है। प्रकाश ही वस्तुतः जीवन और प्राण है।

सूर्यकिरण चिकित्सा

वेदों में प्राकृतिक चिकित्सा के अन्तर्गत सूर्यकिरण चिकित्सा का विशेष उल्लेख है। सूर्य को स्थावर और जंगम जगत् की आत्मा कहा गया है- **सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।** (ऋक.१/११५/१,यजु. ७/४२,

अथर्व. १३/२/३५, तैत्ति. १/४/४३/१)। यह मन्त्र ऋक, यजु और अथर्व तीनों वेदों में आया है। प्रश्नोपनिषद् में भी सूर्य को **'प्राणः प्रजानाम्'** अर्थात् मनुष्य मात्र का प्राण कहा गया है। मत्स्यपुराण का कहना है कि **'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्'** अर्थात् यदि निरोगता की इच्छा है तो सूर्य की शरण में जाओ। अतएव प्राचीन ऋषि-मुनि और आचार्यों ने सूर्योपासना तथा सूर्यनमस्कार आदि की विधि प्रचलित की थी जो आज भी प्रचलित है।

वेदों में उदित होते हुए सूर्य की किरणों का बहुत महत्त्व वर्णित किया गया है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में कहा गया है कि उदित होता हुआ सूर्य मृत्यु के सभी कारणों अर्थात् सभी रोगों को नष्ट करता है। उदित होते हुए सूर्य से अवरक्त (हलकी लाल- इन्फ्रारेड) किरणें निकलती हैं। इन लाल किरणों में जीवनी शक्ति होती है और रोगों को नष्ट करने की विशेष क्षमता होती है। अतएव ऋग्वेद में कहा गया है कि उदित होता हुआ सूर्य हृदय के सभी रोगों को, पीलिया और रक्ताल्पता (अनेमिया) को दूर करता है। अथर्ववेद में भी इस बात की पुष्टि करते हुए कहा गया है कि सूर्य की अवरक्त किरणें हृदय की बीमारियों को तथा खून की कमी को दूर करती हैं।

प्रातः सूर्योदय के समय पूर्वाभिमुख खड़े होने से सूर्य की अवरक्त किरणें सीधे छाती पर पड़ती हैं और उनके प्रभाव से व्यक्ति सदा निरोग रहता है।

सूर्यकिरण-चिकित्सा-हेतु रोगी उदित होते हुए सूर्य के सम्मुख खड़े होकर या बैठकर सूर्य की किरणों को शरीर पर सीधे पड़ने दें और ऋतु के अनुसार शरीर को खुला रखे या हलका कपड़ा पहनें, जिससे किरणों का प्रभाव पूरे शरीर पर पड़ सके। कम-से-कम पंद्रह मिनट सूर्य के सम्मुख रहे। रोग और आवश्यकता के अनुसार यह

समय आधा घंटा तक बढ़ा सकते हैं। इसके बाद सूर्य की किरणें तीव्र हो जाती हैं, अतः विशेष लाभ नहीं होगा। सूर्योदय के समय की किरणों का जो लाभ होता है, वह अन्य समय सम्भव नहीं है।

इस विषय में अथर्ववेद के नौवें काण्ड का आठवाँ सूक्त विशेष महत्त्व का है। इसमें बाईस मन्त्रों में सूर्यकिरण- चिकित्सा से ठीक होने वाले रोगों की एक लम्बी सूची दी गयी है और कहा गया है कि उदित होता हुआ सूर्य इन रोगों को नष्ट करता है। इस सूची में निर्दिष्ट प्रमुख रोग हैं- सिरदर्द, कानदर्द, रक्त की कमी, सभी प्रकार के सिर के रोग, बहरापन, अंधापन, शरीर में किसी प्रकार का दर्द या अकड़न, सभी प्रकार के ज्वर, पीलिया (पाण्डुरोग), जलोदर, पेट के विविध रोग, विष का प्रभाव, वातरोग, कफज रोग, मूत्ररोग, आँख की पीड़ा, फेफड़ों के रोग, हड्डी-पसली के रोग, आँतों और योनि के रोग, यक्ष्मा (टी.बी.), घाव, रीढ़ की हड्डी, घुटना और कूल्हे के रोग आदि। एक अन्य सूक्त में **'सूर्यः कृणोतु भेषजम्'** सूर्य इन रोगों को ठीक करे, कहकर अपचित् (गण्डमाला), गलने और सड़ने वाली बिमारियाँ तथा कुष्ठ आदि रोगों का उल्लेख किया गया है।

अथर्ववेद का कथन है कि सूर्य के प्रकाश में रहना अमृत लोक में रहने के तुल्य है। मृत्यु के बन्धनों को यदि तोड़ना है तो सूर्य के प्रकाश से अपना सम्पर्क बनाये रखें। सूर्य शरीर को निरोगता प्रदान करते हैं- **सूर्यस्ते तन्वे शं तपाति।** (अथर्व. ८/१/५)

ऋग्वेद का कथन है कि सूर्य मनुष्य को निरोगता, दीर्घायुष्य और समग्र सुख प्रदान करते हैं- **सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः।** (ऋक. १०/३६/१४) एक अन्य मन्त्र में कहा है कि सूर्य की किरणें मनुष्य को मृत्यु से बचाती हैं- **सूर्यस्त्वाधिपतिर्मृत्योरुदायच्छतु रश्मिभिः।** (अथर्व. ५/३०/१५)

सूर्य की सात किरणों से सात प्रकार की ऊर्जा प्राप्त होती है- **अधुक्षत् पिप्युषीमिषम् ऊर्जं सप्तपदीमरिः। सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः।।**

(ऋक. ८/७२/१६)

सूर्य की सप्तरंगी की किरणें- सूर्य की किरणें सात रंग की हैं। ऋग्वेद और अथर्ववेद में सूर्य की सात रंग की किरणों का उल्लेख सप्तरश्मि, सप्ताश्व (सप्तअश्व) आदि शब्दों से किया गया है।

इन सात रंग की किरणों का वैज्ञानिक दृष्टि से बहुत महत्त्व है। प्रत्येक किरण का अलग-अलग प्रभाव है। इनकी गति और प्रकृति भी भिन्न-भिन्न है। इन सात रंगों को मिला देने से सफेद रंग हो जाता है। इन सात रंग की किरणों से ही संसार के प्रत्येक पदार्थ को रूप-रंग प्राप्त होता है। इन सात किरणों के तीन भेद किये गये हैं- उच्च, मध्य और निम्न अर्थात् गहरा, मध्यम और हल्का। इस प्रकार ७x३=२१ प्रकार की किरणें हो जाती हैं। इनसे ही संसार के सारे रूप-रंग हैं। अथर्ववेद में इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि ये २१ प्रकार की किरणें संसार में सर्वत्र फैली हुई हैं और ये ही सारे रूप-रंगों को धारण करती हैं- **'ये त्रिषप्ताः परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रतः।'**

(अथर्व. १/१/१)

सात किरणों के नाम और प्रभाव- इन सात किरणों को अंग्रेजी और हिन्दी में वायलेट/बैगनी, इन्डिगो/नीला, ब्ल्यू/आसमानी, ग्रीन/हरा, यलो/पीला, ऑरेंज/नारंगी, रेड/लाल हैं। इनकी तरंग दैर्घ्य/वेव-लेन्थ और आवृत्ति/फ्रीक्वेंसी अलग-अलग है। अतः इनका प्रभाव भी पृथक्-पृथक् है। अपनी गति और प्रकृति के अनुसार ये विभिन्न रोगों को दूर करते हैं। **V - I - B - G - Y - O - R./**

बै-नी-आ-ह-पी-ना-ला। १. बैगनी- शीतल, लाल कणों का वर्धक, क्षयरोग का नाशक। २. नीला- शीतल, पित्तज रोगों का नाशक, पौष्टिक। ३. आसमानी- शीतल, पित्तज रोगों का नाशक, ज्वरनाशक। ४. हरा- समशीतोष्ण, वातज रोगों का नाशक, रक्तशोधक। ५. पीला- उष्ण, कफज रोगों का नाशक, हृदय एवं उदररोग का नाशक। ६. नारंगी- उष्ण, कफज रोगों का नाशक, मानसिक शक्तिवर्धक। ७. लाल- अति उष्ण, कफज रोगों का नाशक, उत्तेजक, केवल मालिश हेतु।

गति और प्रकृति के आधार पर नीचे से ऊपर वाली किरणें क्रमशः अधिक प्रभावशाली हैं। जैसे- लाल से अधिक नारंगी, उससे अधिक पीली और सबसे अधिक प्रभाववाली बैगनी है। अतः बैगनी से अधिक शक्ति वाली किरणों को परा-बैगनी (अल्ट्रा-वॉयलेट) किरणें और लाल से कम शक्तिशाली किरणों को अवरक्त (इन्फ्रा-रेड) किरणें कहते हैं।

वस्तुतः मूल रंग तीन हैं- लाल, पीला और नीला। इनके मिश्रण से ही अन्य रंग बनते हैं। जैसे- लाल और नीले से बैगनी, नीले और सफेद से आसमानी, नीले और पीले से हरा, लाल और पीले से नारंगी।

सूर्य की सप्तरंगी किरणों को तीन परिवार में विभाजित किया गया है- (१)पीला, नारंगी, लाल (२) हरा तथा (३) बैगनी, नीला और आसमानी।

ये किरणें शरीर को शुद्ध करती हैं। इनका विपरीत प्रभाव नहीं होता है।



उपसंहार

प्रत्यक्षदेव सूर्यनारायण एवं सूर्य-नमस्कार
(यौगिक व्यायाम)

इस छोटी सी पुस्तक में प्रत्यक्षदेव सूर्यनारायण की वंदना, प्रार्थना, उत्पत्ति, प्रभाव, महत्ता, द्वादशरूप त्रिदेव स्वरूप, ज्योतिर्लिंग, काशी के द्वादश आदित्य, सूर्यदेव का प्रचलित नाम, अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता एवं पूजन-अर्चन, वैज्ञानिक सौरतथ्य, सूर्यशक्ति का उपयोग, प्रमुख सूर्य मन्दिर, सूर्य चिकित्सा, मोक्षदाता सूर्यदेव, गयातीर्थ एवं सूर्य-नमस्कार यौगिक व्यायाम, सूर्य स्नान, आदि तथ्यों का उल्लेख किया गया है। पुस्तक में वृहद विस्तार नहीं है लेकिन सूर्यदेव से सम्बन्धित आवश्यक साधारण विषयों का उल्लेख किया गया है।

सूर्य-नमस्कार यौगिक व्यायाम को नियमितरूप से प्रतिदिन नित्य अभ्यास करने से अभ्यासियों का शरीर निरोग व स्वस्थ बना रहता है। जैसा आदि पुराण वचन है:-

'आरोग्यं भास्करादिच्छेत्'

सूर्य समस्त रोगों को दूर करने वाले देवता हैं।

इस पुस्तक के माध्यम से मैनें प्रत्यक्षदेव सूर्यनारायण के सरल एवं गूढ़ पहलुओं को सरल भाषा में व्यक्त करने का प्रयास किया है। इस पुस्तक का पूर्ण अध्ययन के पश्चात् सूर्यदेव की महिमा व सूर्य-नमस्कार यौगिक व्यायाम की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् आप अपनी इच्छानुसार सूर्य-नमस्कार यौगिक व्यायाम को करने के लिए पूर्णरूप से स्वतंत्र हैं।

आचार्य विनय कृष्ण



जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज
स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती
शिष्य एवं प्रतिनिधि- पूज्यपाद शङ्कराचार्य जी महाराज
श्रीविद्यामठ, केदारघाट, वाराणसी-१ दूरभाष : (0542) 2450362, 2450520 e-Mail : avimuktaswami@hotmail.com



शुभाशंसा

आचार्य विनय कृष्ण - विनयविशिष्ट तो हैं ही, अपने आचार्यत्त्व को भी अंशुमान् की आभा सा ही आलोकित रखते हैं। तभी तो आपने अनेक ग्रन्थरत्नों की रचना और प्रकाशन की शृंखला में 'प्रत्यक्षदेव श्रीसूर्यनारायण' सा 'माणिक्य" भी प्रस्तुत कर दिया है।

पण्डित अम्बिकादत्त व्यास जी के शब्दों में सूर्य न केवल एक बिम्ब अथवा प्रकाश के मात्र पुंज हैं अपितु आकाशमण्डल के रत्न, नक्षत्रसमूह के सम्राट्, इन्द्र की पूर्व दिशारूपी नायिका के कुण्डल, ब्रह्माण्डरूपी गृह के दीपक, कमलकुल के प्रेमपात्र, चक्रवाकों का शोक दूर करने वाले, भ्रमरसमूह के आश्रय, समस्त व्यवहार के प्रवर्तक और दिन के स्वामी हैं। वे ही दिन और रात के जनक हैं, वे ही वर्ष को बारह भागों में विभाजित करते हैं, वे ही छः ऋतुओं के कारण हैं और वे ही उत्तरायण तथा दक्षिणायन का अवलम्बन करते हैं, इन्होंने ही सतयुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग का भेद किया है, इन्होंने ही कल्पों का विभाग किया है, इनका आधार लेकर ही ब्रह्मा की परार्द्ध (सबसे बड़ी और अन्तिम) संख्या पूरी होती है और ये ही बार-बार जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं। वेद इन्हीं की वन्दना करते हैं। गायत्री इन्हीं का गान करती हैं और ब्रह्मनिष्ठ ब्राह्मण प्रतिदिन इन्हीं की उपासना करते हैं। भगवान् रामचन्द्र के कुल के मूल ये सूर्यदेव धन्य हैं। ये भगवान् सूर्य सभी के प्रणम्य हैं। इनकी आराधना, उपासना व्यक्ति के सर्वविध कल्याण का पाथेय है। प्रस्तुत ग्रन्थरत्न सांसारिक ऊहापाहों से हताश, निराश लोगों को उत्साह-ऊष्मा सम्पन्न बनाएगा - इसमें सन्देह नहीं।

आचार्य विनय कृष्ण - हमारे पूज्यपाद गुरुवर्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारका शारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज के प्रकट कृपाभाजन हैं, श्रीचरणों का आशीर्वाद इन्हें सर्वथा और सर्वदा प्राप्त है, हम भी अपनी शुभकामनाएँ समर्पित करते हैं।

नारायण-स्मरणपुरस्सर, आह्लादितान्तःकरण .....

(स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती)



लेखक का संक्षिप्त परिचय



नाम – आचार्य विनय कृष्ण

जन्म – जनवरी–१९४५, वाराणसी

शिक्षा – काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी।

अन्य शिक्षा – इलाहाबाद, मध्य प्रदेश, दिल्ली

पदेन अध्यक्ष – हैप्पी होम एजुकेशन ग्रुप, वाराणसी

पिताश्री – स्व. विजय कृष्ण, कलाविद, रि.स. संग्रहाध्यक्ष– भारत कला भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पिताश्री मामा – स्व. पद्मविभूषण राय कृष्णदास, हिन्दी साहित्यकार, लेखक, विख्यात कलाविद, संस्थापक भारत कला भवन संग्रहालय – 'भारतीय कलाकृति', काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

पिताश्री फूफा – स्व. राजा सर मोतीचन्द, अजमतगढ़ पैलेस, मोतीझील, महमूरगंज, वाराणसी

भ्राताश्री – श्री अभय कृष्ण अग्रवाल, रि. एसोसिएट डॉयरेक्टर – लुपिंन लेबोरेटरिज़ ग्लोबल समूह, मुम्बई

फूफाश्री – डॉ. आर.पी. अगरवाला, डी. एससी.(लन्दन), रि.वरिष्ठ वैज्ञानिक, भाभा एटामिक रिसर्च सेन्टर, मुम्बई

स्थायी परिवार – स्थायी निवासी वाराणसी (लगभग चार सौ वर्ष)

स्थायी निवास – हैप्पी होम कैम्पस, मकबूल आलम रोड, खजुरी, वाराणसी – २२१००२, इण्डिया

sysht

स्कूल ऑफ योग साइंस एण्ड हेल्थ टेक्नोलॉजी
हैप्पी होम कैम्पस, मकबूल आलम रोड, खजुरी क्रासिंग, वाराणसी - २२१००२